सम्पादकीय

विश्व जल दिवस: मालवा बनेगा भविष्य का रेगिस्तान

कहा जाता रहा है कि मालवा भूमि गहन गंभीर, पग-पग रोटी डग-डग नीर। लोग पानी के लिए पग-पग नहीं 10-10 किलोमीटर तक का सफर करते हैं। जमीन में 1000 फुट नीचे चला गया है पानी और वैज्ञानिक कहते हैं कि 1200 फुट के बाद समुद्र का खारा जल शुरू हो जाता है। आखिर नर्मदा कब तक मालवा की प्यास बुझाती रहेगी। आखिर ऐसा क्यों हुआ? विकास के नाम पर जिस तरह से मालवा के पेड़ और पहाड़ों का काटा गया है उसे देखकर पर्यावरण प्रेमी का दुःख कोई विकास प्रेमी नहीं समझ सकता। मालवा की प्रमुख नदियों में नर्मदा, क्षिप्रा, चंबल और कालिसिंध की दुर्दशा के बारे में सभी जानते हैं। बांध ने मार दिया नर्मदा को, शहरीकरण और लोगों ने सूखा दिया क्षिप्रा व कालिसिंध को और चंबल नदी के आसपास के जंगलों की कटाई के कारण अब डाकू तो नहीं रहे, लेकिन नदी भी नदारद होने लगी है। माही और बेतवा नदी का नाम तो कोई शायद ही जानता हो। कुएं, कुंड, तालाब और अन्य जलाशयों की जगह ट्यूबवेल ले चुके हैं। असंख्य ट्यूबवेलों ने मालवा की धरती को भीष्म पितामह के शरीर की तरह छलनी कर दिया है।

पहले कहते थे कि सुबह देखना हो तो बनारस की देखो, शाम देखना हो तो अवध की देखो, लेकिन शब अर्थात रात देखना हो तो मालवा की देखो। परंतु विकास के नाम पर अब सब कुछ मटियामेट कर दिया गया है। अब गर्मी में रातों को गर्म हवाओं का डेरा रहता है। बारिश में भी सौंधी माटी की सुगंध अब कहां रही। विंध्याचल की पर्वत श्रेणियों का अस्तित्व अब खतरे में हैं। बहुत से शहर जहां पर पर्वत, पहाड़ी या टेकरी हुआ करते थे अब वहां खनन कंपनियों ने सपाट मैदान कर दिए है। पर्वतों के हटने से मौसम बदलने लगा है। गर्म, आवारा और दक्षिणावर्ती हवाएं अब ज्यादा परेशान करती है। हवाओं का रुख भी अब समझ में नहीं आता कि कब किधर चलकर कहर ढहाएगा। यही कारण है कि बादल नहीं रहे संगठित

> *सहारा और थार रेगिस्तान की लाखों वर्ग मील की भूमि पर पर्यावरणवादियों ने बहुत वर्ष शोध करने के बाद पाया कि आखिर क्यों धरती के इतने बड़े भू-भाग पर रेगिस्तान निर्मित हो गए। उनके अध्ययन से पता चला कि यह क्षेत्र कभी हराभरा था, लेकिन लोगों ने इसे उजाड़ दिया। प्रकृति ने इसका बदला लिया, उसने तेज हवा, धूल, सूर्य की सीधी धूप और अत्यधिक उमस के माध्यम से उपजाऊ भूमि को रेत में बदल दिया और धरती के गर्भ से पानी को सूखा दिया।*

तो बारिश भी अब बिखर गई है। झाबुआ और जबलपुर के जंगल के नाम पर अब मालवा के पास शेर-हिरण को देखने के लिए राष्ट्रीय पार्क ही बचे हैं। वहां भी अवैध कटाई-चराई और जानवरों की खाल नोंचने का सिलसिला जारी है। अब तो दो शहरों या दो कस्बों के बीच ही थोड़ी बहुत हरियाली बची है जहां भयभीत होकर खड़े हुए हैं वृक्ष।

वृक्षों के कटने से पक्षियों के बसेरे उजड़ गए तो फिर पक्षियों की सुकूनदायक चहचहाहट भी अब शहर से गायब हो गई है। अब प्रेशर हॉर्न है जो आदमी के दिमाग की नसों फाड़कर रख देता है। आदमी मर जाएगा खुद के ही शोर से। नर्मदा की घाटी के जंगलों की लगातार कटाई से कई दुर्लभ वनस्पतियां अब दुर्लभ भी नहीं रहीं। जंगल बुक अब सिर्फ किताबी बातें हैं। खबर में आया है कि समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है और आने वाले समय में बहुत से तटवर्ती नगर डूब जाएंगे। यदि वृक्षों को विकास के नाम पर काटते रहने की यह गति जारी रही, तो भविष्य में धरती पर दो ही तत्वों का साम्राज्य रहेगा- रेगिस्तान और समुद्र। समुद्र में जीव-जंतु होंगे और रेगिस्तान में सिर्फ रेत।

सहारा और थार रेगिस्तान की लाखों वर्ग मील की भूमि पर पर्यावरणवादियों ने बहुत वर्ष शोध करने के बाद पाया कि आखिर क्यों धरती के इतने बड़े भू-भाग पर रेगिस्तान निर्मित हो गए। उनके अध्ययन से पता चला कि यह क्षेत्र कभी हराभरा था, लेकिन लोगों ने इसे उजाड़ दिया। प्रकृति ने इसका बदला लिया, उसने तेज हवा, धूल, सूर्य की सीधी धूप और अत्यधिक उमस के माध्यम से उपजाऊ भूमि को रेत में बदल दिया और धरती के गर्भ से पानी को सूखा दिया। और फिर चला मानव को खतम करने का चक्र। लोग पानी, अन्न और छाव के लिए तरस गए। लोगों का पलायन और रेगिस्तान की चपेट में आकर मर जाने का सिलसिला लगातार चलता रहा। उक्त पूरे इलाके में सिर्फ चार गति रह गई थी- तेज धूप, बाढ़, भूकंप और रेतीला तूफान। यदि यही हालात रहे तो भविष्य कहता है कि बची हुई धरती पर फैलता जाएगा रेगिस्तान और समुद्र।

डॉ. वंदना पालीवाल

क्यों न मूल शोध पर ही मिलें पीएचडी की डिग्रियां?

दिल्ली विश्वविद्यालय के हालिया संपन्न 97वें दीक्षांत समारोह में 670 डॉक्टरेट की डिग्रियां दी गईं। मतलब यह कि ये सभी पीएचडी धारी अब अपने नाम के आगे डॉ. लिख सकेंगे। क्या इन सभी का शोध पहले से स्थापित तथ्यों से कुछ हटकर था? बेशक, उच्च शिक्षा में शोध का स्तर अहम होता है। इसी से यह भी तय किया जाता है कि पीएचडी देने वाले विश्वविद्यालय का स्तर किस तरह का है। अगर अमेरिका के मैसाचुसेट्स इंस्टीच्यूट आफ टेक्नालॉजी (एमआईटी), कोलोरोडा विश्वविद्लाय, ब्रिटेन के कैम्ब्रिज और आक्सफोर्ड विश्वविद्लायों का लोहा सारी दुनिया मानती है तो कोई तो बात होगी ही न? यह सिर्फ अखबारों में विज्ञापन देकर दुनिया के सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्लाय नहीं बने हैं।

आरके सिन्हा

इनका नाम उनके विद्यार्थियों द्वारा किये गये मौलिक शोध के कारण ही हैंकबड़ा सवाल यह है कि क्या हमारे यहां हर साल जो थोक के भाव से पीएचडी की डिग्रियां दी जाती हैं, उनका आगे चलकर समाज या देश को किसी रूप में लाभ भी होता है? सिर्फ दिल्ली विश्वविद्लाय ने एक वर्ष में 670 पीएचडी की डिग्रियां दे दीं। अगर देश के सभी विश्वविद्लायों से अलग-अलग विषयों में शोध करने वाले रिसर्चर को मिलने वाली पीएचडी की डिग्री की बात करें तो यह आंकड़ा हर साल हजारों में पहुंचेगा। मतलब हरेक दस सालों के दौरान देश में लाखों नए पीएचडी प्राप्त करने वाले पैदा हो ही जाते हैं। क्या इन शोध करने वालों का शोध भी मौलिक होता है? क्या उसमें कोई इस तरह की स्थापना की गई होती है जो नई होती है? यह सवाल पूछना इसलिये जरूरी है, क्योंकि हर साल केन्द्र और राज्य सरकारें बहुत मोटी राशि पीएचडी के लिए शोध करने वाले शोधार्थियों पर व्यय करती हैं। इन्हें शोध के दौरान ठीक-ठीक राशि दी जाती है ताकि इनके शोध कार्य में किसी तरह का व्यवधान या अड़चन न आए और इनका जीवन यापन भी चलता रहे ।

निश्चय ही उच्च कोटि के शोध से ही शिक्षण संस्थानों की पहचान बनती है। जो संस्थान अपने शोध और उसकी क्वालिटी पर ध्यान नहीं देते उन्हें कभी गंभीरता से नहीं लिया जाता। देश में सबसे अधिक पीएचडी की डिग्रियां तमिलनाडू, कर्नाटक और उत्तर प्रदेश में दी जाती है। मानव संसाधन मंत्रालय की 2018 में जारी एक रिपोर्ट पर यकीन करें तो उस साल तमिलनाडू में 5,844 शोधार्थियों को पीएचडी दी गई। कर्नाटक में पांच हजार से कुछ अधिक शोधार्थी पीएचडी की डिग्री लेनें में सफल रहे। उत्तर प्रदेश में 3,396 शोधार्थियों को यह डिग्री मिली। बाकी राज्य भी पीएचडी देने में कोई बहुत पीछे नहीं हैं। भारत में साल 2018 में 40.813 नए पीएचडीधारी सामने आए। आखिर इतने शोध होने का लाभ किसे मिल रहा है? शोध पूरा होने और डिग्री लेने के बाद उस शोध का होता क्या है? क्या इनमें से एकाध प्रतिशत शोधों को प्रकाशित करने में कोई प्रकाशक तैयार होते हैं ? कोई प्रतिष्ठित अखबार की नजर भी उन शोधों पर जाती है ? क्या हमारे यहां शोध का स्तर सच में स्तरीय या विश्व स्तरीय होता है? यह बहुत जरूरी सवाल हैं। इन पर गंभीरता से बात होनी भी जरूरी है। जो भी कहिए हमारे यहां शोध को लेकर कोई भी सरकार या विश्वविद्यालय बहुत गंभीरता का भाव नहीं रखता ।

भारत में जब उच्च शिक्षा संस्थानों की शुरूआत हुई थी तभी क्वालिटी रिसर्च को बहुत महत्व नहीं दिया गया। निराश करने वाली बात यह है कि हमने शोध पर कायदे से कभी फोकस ही नहीं किया। अगर हर साल हजारों शोधार्थियों को पीएचडी की डिग्री मिल रही है तो फिर इन्हें विश्व स्तर पर सम्मान क्यों नहीं मिलता। माफ करें हमारी आईआईटी संस्थानों की चर्चा भी बहुत होती है। यहां पर भी हर साल बहुत से विद्यार्थियों को पीएचडी मिलती है। क्या हमारे किसी आईआईटी या इंजीनियरिंग के कॉलेज के किसी छात्र को उसके मूल शोध के लिए नोबेल पुरस्कार के लायक माना गया? नहीं न। अगर आप अकादमिक दुनिया से जुड़े हैं तो आप जानते ही होंगे कि हमारे यहां पर शोध का मतलब होता है पहले से प्रकाशित सामग्री के आधार पर ही अपना रिसर्च पेपर लिख देना। आपका काम खत्म। यही वजह है कि शोध में नएपन का घोर अभाव दिखाई देता है। यह सच में एक घोर दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि हमारे यहां पर शोध के प्रति हर स्तर पर उदासीनता का भाव है। शोध इसलिए किया जाता है ताकि पीएचडी मिल जाए और फिर एक अदद नौकरी। आप अमेरिका का उदाहरण लें। वहां के विश्वविद्लायों में मूल शोध पर जोर दिया जाता है। इसी के चलते वहां के शोधार्थी लगातार नोबेल पुरस्कार जीत पाने में सफल रहते हैं। इस बहस को जरा और व्यापक कर लेते हैं। हमारी फार्मा कंपनियों को ही लें। ये नई दवाओं को ईजाद करने के लिए होने वाले रिसर्च पर कितना निवेश करती है? यह मुनाफे के अनुपात में बहुत ही कम राशि शोध पर लगाती हैं। यही हालत हमारे स्वास्थ्य क्षेत्र सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की रही हैं। इंडियन ड्रग्स एंड फार्मास्युटिकल लिमिटेड (आईडीपीएल) की ही बात कर लें। इसकी स्थापना 1961 में की गई थी, जिसका प्राथमिक उद्देश्य आवश्यक जीवनरक्षक दवाओं में आत्मनिर्भरता हासिल करना था। पर इसे करप्शन के कारण घाटा पर घाटा हुआ। यहाँ भी कभी कोई महत्वपूर्ण शोध नहीं हुआ। अब देखिए कि भारत में शोध के लिए सुविधाएं तो बहुत बढ़ी हैं, इंटरनेट की सुविधा सभी शोधार्थियों को आसानी से उपलब्ध है, प्रयोगशालाओं का स्तर भी सुधरा है, सरकार शोध करनेवालों की आर्थिक मदद भी करती है। इसके बावजूद हमारे यहां शोध के स्तर घटिया ही हो रहे हैं। तो फिर हम क्यों इतनी सारी

पीएचडी की डिग्रियों को बांटते ही जा रहे हैं? आखिर हम साबित क्या करना चाहते हैं? मैं इस तरह के अनेक शोधार्थियों को जानता हूं जिन्होंने कुछ सालों तक अपने विश्वविद्लायों से पीएचडी करने के नाम पर पैसा लिया और वहां के छात्रावास का भी भरपूर इस्तेमाल किया। उसके बाद वे बिना शोध पूरा किए अपने विश्वविद्लाय को छोड़ गए या वहीं बैठकर राजनीति करने लगे। एक बात समझ लें कि हमें शोध की गुणवत्ता पर बहुत ध्यान देना होगा। उन शोधार्थियों से बचना होगा जो दायें-बायें से कापी-कट और पेस्ट कर अपना शोध थमा देते हैं। इस मानसिकता पर तत्काल से रोक लगनी चाहिए। शोध का विषय तय करने का एक मात्र मापदंड यही हो कि इससे भविष्य में देश और समाज को क्या लाभ होगा? शोधार्थियों के गाइड्स पर भी नजर रखी जाए कि वे किस तरह से अपने शोधार्थी को सहयोग कर रहे हैं। बीच-बीच में शिकायतें मिलती रहती हैं कि कुछ गाइड्स अपने शोधार्थियों को प्रताड़ित करते रहते हैं। इन सब बिन्दुओं पर भी ध्यान दिया जाए।

आप कह सकते हैं कि जर्मनी में ऐसी क्या चीज है, जिसके कारण छात्र आकर्षित हो रहे हैं, तो इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि वहां उचित शिक्षा की फीस बहुत कम है और न केवल शिक्षा की, बल्कि शिक्षा के बाद काम करने के लिए परमिट भी वहां आसानी से मिल जाता है। यूरोप में पढ़ाई करना तमाम ब्राइट स्टूडेंट्स का सपना होता है, और बात जब जर्मनी की हो, तो यहां से लोगों का एक खास लगाव होना स्वभाविक है। यूं भी जर्मनी टेक्नोलॉजी में काफी आगे है और यहां का एजुकेशन सिस्टम भी कई देशों की तुलना में काफी बेहतर माना जाता है। ऐसे में तमाम भारतीय छात्र जर्मनी की ओर पढ़ाई का रूख करते ही हैं। वास्तव में उन्हें काफी सहूलियत भी मिलती है।

जर्मनी में पढ़ाई करें और बढ़िया स्कॉलरशिप भी पाएं

चूंकि एजुकेशन डेस्टिनेशन के रूप में हाल-फिलहाल जर्मनी काफी पॉपुलर हो रहा है, और वहां क्वालिटी एजुकेशन भी बड़े पैमाने पर मिल रही है, इसलिए स्वाभाविक है कि वहां भारतीय छात्रों की संख्या भी लगातार बढ़ती जा रही है। एक अनुमान के मुताबिक प्रत्येक वर्ष 7 फीसदी से अधिक भारतीय छात्र वहां पढ़ने जा रहे हैं। आप कह सकते हैं कि जर्मनी में ऐसी क्या चीज है, जिसके कारण छात्र आकर्षित हो रहे हैं, तो इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि वहां उचित शिक्षा की फीस बहुत कम है और न केवल शिक्षा की, बल्कि शिक्षा के बाद काम करने के लिए परमिट भी वहां आसानी से मिल जाता है। खास बात यह है कि अगर आप जर्मनी में शिक्षा लेना चाहते हैं, तो आप बेहतरीन स्कॉलरशिप भी पा सकते हैं। आइए जानते हैं कुछ स्कॉलरशिप प्रोग्राम्स के बारे में...

एचडब्ल्यूके फैलोशिप

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है और यह एक प्रतिष्ठित स्कॉलरशिप मानी जाती है। अगर आप एक काबिल वैज्ञानिक हैं, तो फेलोशिप प्रोजेक्ट के बेसिस पर जर्मनी में स्टडी के लिए रेग्युलर फैलोशिप और जूनियर फैलोशिप 3 और 10 महीने के लिए प्रदान की जाती है। जाहिर तौर पर यह एक आकर्षक फैलोशिप है, जो ब्राइट स्टूडेंट्स के लिए काफी मददगार साबित होती है। यूं भी विज्ञान के प्रयोगों में काफी धन की आवश्यकता होती है और इसीलिए इस स्कॉलरशिप प्रोग्राम को काफी हाईलाइट किया जाता है।

मैनहीम यूनिवर्सिटी डॉचलैंड स्कॉलरशिप

इस स्कॉलरशिप का नाम तो आपने सुना ही होगा।

साइंस और इंजीनियरिंग में डीएएडी इंटर्नशिप

इंटर्नशिप में करंट में चल रहे रिसर्च और भिन्न परियोजनाओं के हिस्से के तौर पर डॉक्टोरल स्टूडेंट्स, प्रोफेसर या साइंटिस्ट के साथ काम करने का मौका इसमें मिलता है। गणित, विज्ञान या फिर इंजीनियरिंग के स्टूडेंट अंतिम वर्ष में या उससे पहले भी इंटरव्यू के लिए आवेदन कर सकते हैं। इसमें ट्रैवल एलाउंस के लिए आपको प्रत्येक महीने ?50 हजार तक मिल जाते हैं, जो कि पढ़ाई करने वाले स्टूडेंट के लिए सफिशिएंट माने जा सकते हैं।

बोहरिंगर इंगेलहिम फोंड्स पीएचडी फेलोशिप

भारत के बेहद जूनियर साइंटिस्ट इस स्कॉलरशिप का फायदा उठा सकते हैं। वे जर्मनी के हायर एजुकेशन इंस्टिट्यूट में पीएचडी कर सकते हैं। दाखिला लेने के बाद, स्कॉलरशिप के तहत साइंटिफिक रिसर्च और लाइव फील्ड एक्सपेरिमेंट के लिए इसमें फंड प्रोवाइड किया जा सकता है। आप यह जानकर हैरान रह जाएंगे कि मासिक भत्ते के रूप में तकरीबन 1.2 लाख रुपया दिया जाता है तो ?12000 रिसर्च एंड डेवलपमेंट भत्ता के तौर पर। इसके अलावा भी दूसरे भत्ते इसमें शामिल हैं। आइंस्टाइन फोरम टाइमर एंड डैमर ऐंड बेंज फाउंडेशन भारत के ह्यूमैनिटीज, सोशल साइंस अथवा नेचुरल साइंसेज के छात्रों को यह फेलोशिप प्रोवाइड करता है। महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टीन के नाम पर शुरू की गयी इस फेलोशिप का मतलब बेहतर प्रतिभाओं को सामने लाना है।

अगर आप बेहतरीन मेरिट पाते हैं, तो ग्रेजुएशन या पोस्ट ग्रेजुएशन के लिए आप इस स्कॉलरशिप हेतु आवेदन कर सकते हैं। ?24000 प्रत्येक महीने आपको स्कॉलरशिप के तौर पर दिए जाते हैं जो कि एक काफी आकर्षक स्कॉलरशिप मानी जा सकती है। विदेशों में अगर आपको इतनी रकम पढ़ाई के लिए मिलती है, वह भी प्रत्येक महीने तो वह आपकी शिक्षा में निश्चित तौर पर मददगार साबित होगी।

जीएसएलएस फेलोशिप, विर्जवर्ग यूनिवर्सिटी, जर्मनी

हम बोल रिसर्च ट्रैक स्कॉलरशिप स्कॉलरशिप पीएचडी की पढ़ाई करने वालों के लिए है चाहे इस्ट्रीम जो भी हो अगर आप मास्टर डिग्री ले चुके हैं इस स्कॉलरशिप के लिए अप्लाई कर सकते हैं तकरीबन 6 महीने तक ?63000 तक आपको मिल सकते हैं ?32000 प्रत्येक महीने चुने हुए हैं स्कॉलर के बच्चों के लिए खर्च दिए जाते हैं तो जाहिर तौर पर आप को लाभ पहुंचा सकता है

जीएसएलएस फैलोशिप

विर्जवर्ग यूनिवर्सिटी, 3 सालों के लिए पीएचडी फेलोज को यह स्कालरशिप देती है। खास बात यह है कि इसमें आपको लाइफ साइंस के किसी भी सब्जेक्ट में डिग्री लेनी होती है। इस फेलोशिप में प्रत्येक वर्ष ?4 लाख रिसर्च से सम्बंधित खर्च, यात्रा आदि पर खर्च किए जाते हैं।

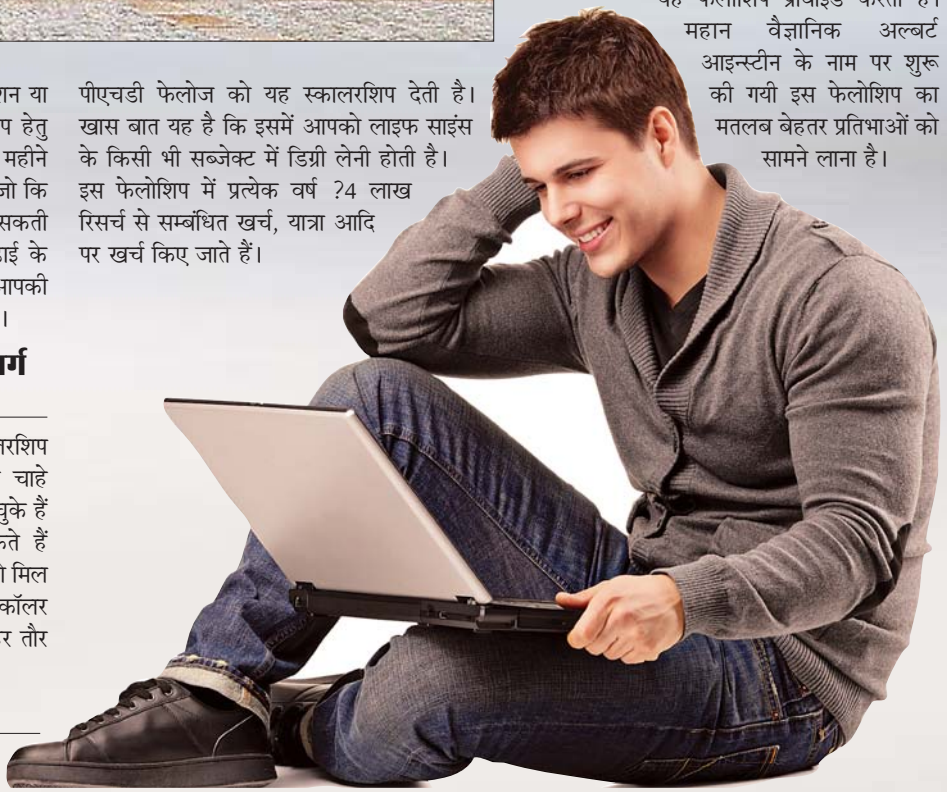

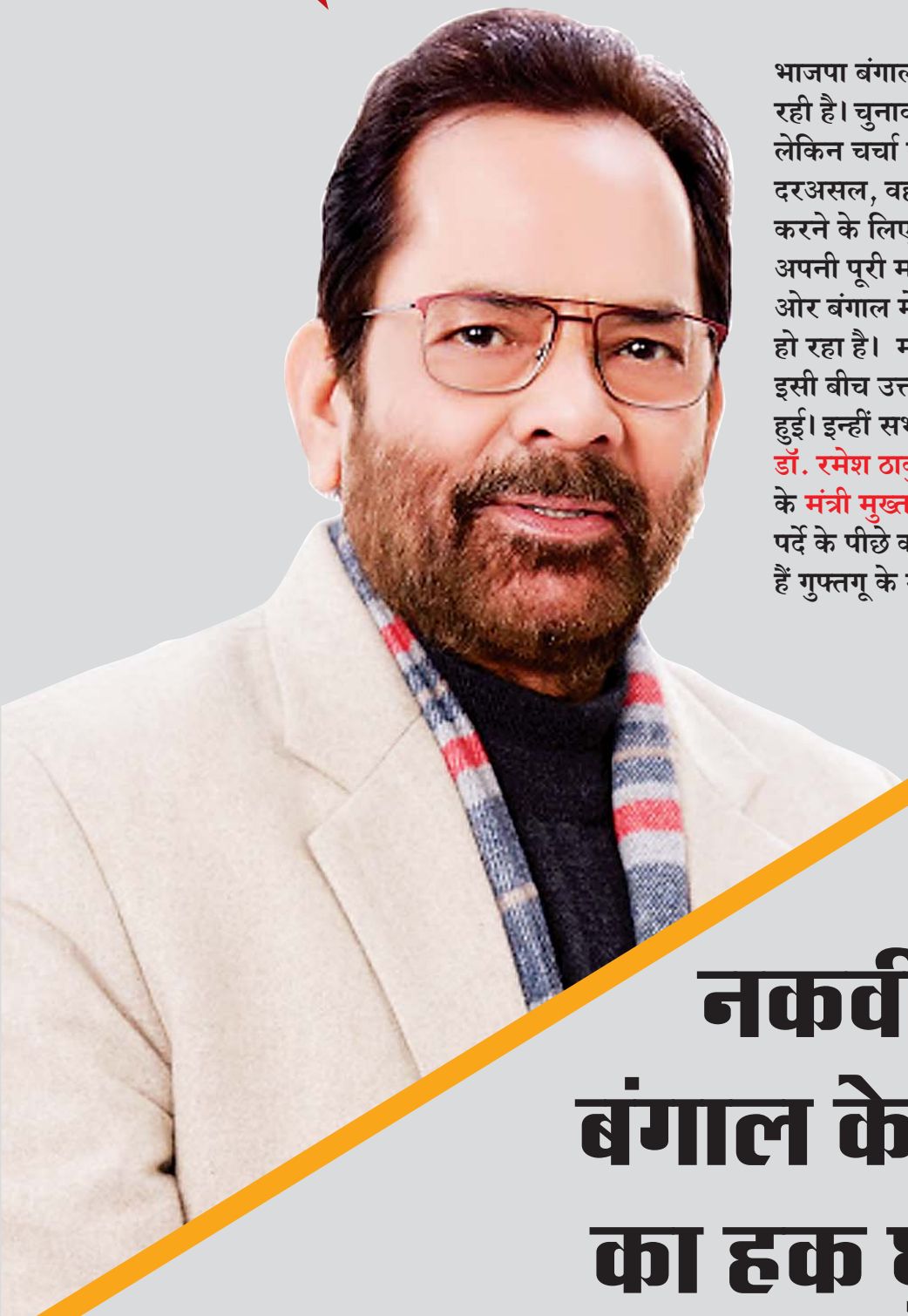

भाजपा बंगाल की लड़ाई को अंतिम लड़ाई मान रही है। चुनाव वैसे जो पांच राज्यों में हो रहे हैं। लेकिन चर्चा सबसे ज्यादा पश्चिम बंगाल की है। दरअसल, वहां भाजपा ने टीएमसी को परास्त करने के लिए जबरदस्त घेराबंदी की हुई है। अपनी पूरी मशीनरी वहां लगाई हुई है। दूसरी ओर बंगाल में रोज कोई न कोई न बखेड़ा खड़ा हो रहा है। ममता बनर्जी पर हमला भी हुआ। इसी बीच उत्तराखंड में मुख्यमंत्री की भी बदली हुई। इन्हीं सभी तमाम सियासी घटनाओं पर **डॉ. रमेश ठाकुर** ने केंद्रीय अल्पसंख्यक मामलों के **मंत्री मुख्तार अब्बास नकवी** से सियासी पर्दे के पीछे की चीजों को टटोलना चाहा। पेश हैं गुफ्तगू के मुख्य सारांश...

साक्षात्कार

नकवी ने कहा- बंगाल के स्थानीयों का हक घुसपैठियों में नहीं बंटने देंगे

दादा अब पार्टी का हिस्सा हैं। एक ईमानदार कार्यकर्ता के तौर पर खुद को समर्पित किया है।

प्रश्न- जारी
विधानसभा चुनावों में भी प्रधानमंत्री ही मुख्य चेहरा हैं?

उत्तर- निश्चित रूप से, इसमें कोई दो राय नहीं! प्रधानमंत्री की ईमानदारी और उनके एतिहासिक फैसलों ने उन्हें विश्व का सबसे बड़ा नेता बना दिया है। सभी राज्य भी यही चाहते हैं कि प्रधानमंत्री के कार्यकाल में उनके प्रदेश में भी भाजपा की ही हुकूमत हो ताकि विकास की गंगा बह सके। सभी पांच राज्यों में प्रधानमंत्री स्टार प्रचारक की भूमिका निभा रहे हैं। उनकी लहर आज भी पहले जैसी बरकरार है।

प्रश्न- तकरीबन सभी राज्यों को भाजपा साध चुकी है। अब अंतिम फाइट पश्चिम बंगाल में ही है?

उत्तर- भारतीय जनता पार्टी विश्वास और विकास के साथ राज्य के विधानसभा चुनावों में जाती है। क्योंकि जनता का वास्ता इन्हीं दोनों से होता है। विकास के साथ विश्वास भी जरूरी है। देशवासियों का अटूट विश्वास पार्टी पर है। इसलिए हम दूसरे दलों की तरह लोगों की भावनाओं और उनके विश्वास से नहीं खेलते हैं। यही कारण है कि हम एक-एक करके सभी राज्यों में जीतते गए। भाजपा मुद्दों को उलझाती नहीं, बल्कि सुलझाने में विश्वास रखती है। हम मुद्दों से राजनीति नहीं करते। राज्य की जरूरतों के हिसाब से चुनावों में मुद्दा बनाते हैं। बंगाल में भी हम यही सब कर रहे हैं। बंगाल में सीमा पार से अवैध घुसपैठ कैसे हुई, पूर्ववर्ती सरकारों की बदौलत। हमने प्रण किया है इस बीमारी को रोकेंगे।

प्रश्न- पर लगता ऐसा है कि जैसे भाजपा की लड़ाई ममता बनर्जी से व्यक्तिगत हो गई हो?

उत्तर- राजनीति में व्यक्तिगत कुछ नहीं होता। समाज सेवा भाव को लोग राजनीति कहने लगते हैं। प्रदेश की जनता जिस हाल में है, उसका हम-आप दिल्ली में बैठकर अंदाजा नहीं लगा सकते। स्थानीय लोगों का हक दूसरों को बांटा जा रहा है। पूरा बंगाल अवैध नागरिकों से बसा दिया गया है। इस कृत्य में सिर्फ टीएमसी ही दोषी नहीं, बल्कि वाम पार्टियां और कांग्रेस भी बराबर की भागीदार हैं। तीनों ने मिलकर क्रांतिकारियों की धरती को बदनुमा कर दिया। उनकी आत्माएं इन तीनों पार्टियों को कोसती होंगी।

प्रश्न- ममता बनर्जी पर हुए हमले का आरोप भाजपा पर लग रहा है?

उत्तर- ये सब ड्रामा है। जब वह फाइट से अलग हो गईं, तो इमोशनल कार्ड खेलने लगीं। ये उनका एक्सपाईरी फामूर्ला है, जो शायद काम नहीं आएगा। उन्होंने भाजपा पर आरोप लगाया है, जबकि, सच्चाई क्या है ये वहां की जनता बखूबी जानती है। हमले को लेकर हमने जांच की मांग की है और चुनाव आयोग से घटना से संबंधित सीसीटीवी फुटेज को सार्वजनिक करने की गुजारिश की है। दो मई को जब रिजल्ट आएगा, तब सभी का जवाब मिल जाएगा। उस दिन जनता अपना फरमान सुनाएगी। दीदी को गद्दी से बेदखल होना होगा। बंगाल की जनता मजबूरन उन्हें बर्दाश्त कर रही है।

प्रश्न- पांच राज्यों के चुनावों के बीच उत्तराखंड के सियासी घटनाक्रम का अनुकूल असर तो नहीं पड़ेगा?

उत्तर- दरअसल, यह हमारा अंदरूनी मामला है जिसे बिना हंगामे के निपटा लिया गया। उत्तराखंड पर्वतीय राज्य है वहां की सियासत अन्य राज्यों के मुकाबले अलहदा होती है। पांच राज्यों में हो रहे विधानसभा चुनाव से इसका कोई लेना देना नहीं? तीरथ सिंह रावत पार्टी के ईमानदार सदस्य हैं। उनको जिम्मेदारी सौंपी गई है। मुझे उम्मीद है सरकार और संगठन में जो थोड़ा बहुत असंतोष है उसे जल्द दूर कर लेंगे।

प्रश्न- कौन हो सकता है मुख्यमंत्री का चेहरा। मिथुन चक्रवर्ती भी पार्टी में शामिल हो गए हैं?

उत्तर- राज्यों की परिस्थितियों के हिसाब से हम चुनाव लड़ते हैं। मुख्यमंत्री का चेहरा कौन होगा, इसे मुद्दा नहीं बनाते। पहले चुनाव शांति पूर्ण संपन्न हों। परिणाम आने के बाद सामूहिक रूप से मुख्यमंत्री बनाने का फैसला पार्टी के शीर्ष नेता सबकी सहमति से करते हैं। आपको दो मई के बाद इस सवाल का जवाब मिलेगा। फिलहाल हमारा पूरा फोकस चुनाव जीतने पर है। हम अपनी बात बंगाल के प्रत्येक घर तक पहुंचा पाएं, इस पर ज्यादा जोर है। पांचों राज्यों में हम प्रधानमंत्री के कामों को लेकर जा रहे हैं। मिथुन चक्रवर्ती के आने से पार्टी निश्चित रूप से मजबूत होगी।

प्रश्न- उनका कोबरा वाला बयान पार्टी को असहज भी कर रहा है?

उत्तर- बिल्कुल नहीं? देखिए, मिथुन दा नेता से पहले कलाकार हैं। एक कलाकार के भीतर कई रूप शामिल होते हैं। उनका कोबरा वाला बयान दरअसल टीएमसी के उन नेताओं के लिए था, जिन्होंने जनता को परेशान किया हुआ है। जनता की सुनते नहीं हैं। उन्हें ही डसने की बात कह रहे हैं। दादा अब पार्टी का हिस्सा हैं। एक ईमानदार कार्यकर्ता के तौर पर खुद को समर्पित किया है।

लोकसभा में 18 सीटें मिलने के बाद तय हो गया था कि अगली सरकार भाजपा की ही बनेगी।

प्रश्न- क्या पार्टी बंगाल में जीत रही है?

उत्तर- सौ फीसदी, क्योंकि लड़ाई अब एक तरफा हो गई है। टीएमसी लड़ाई से बाहर हो गई है। ममता बनर्जी के बड़े नेताओं ने पार्टी से किनारा करके भाजपा का दामन थाम लिया है। इसलिए ममता बनर्जी अब कतार में अकेली ही खड़ी हैं। भाजपा की रैलियों और चुनावी सभाओं में जुटती हजारों-लाखों लोगों की भीड़ बताती है कि बंगाल की जनता क्या चाहती है? वहां बदलाव की सुगबुगाहट शुरू हो गई है। लोकसभा में 18 सीटें मिलने के बाद तय हो गया था कि अगली सरकार भाजपा की ही बनेगी।

मां

अपराध बोध की भावना के साथ जज साहब अपनी मां को वृद्धाश्रम छोड़ने गए। एडमिशन फॉर्म के साथ जरूरी फीस भी जमा कर दी। जज साहब ने कुछ रुपये देकर वृद्धाश्रम के मैनेजर के साथ दोस्ती कर ली और मां की अच्छी तरह से देखभाल करने के लिए सिफारिश कर दी। मैनेजर ने कहा-" साहब, चिंता मत कीजिए। आपकी मां हमारी मां है। हम उनका पूरा ख्याल रखेंगे। समय-समय पर खाना और दवाई भी देते रहेंगे। अब आपको चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है।"

समीर उपाध्याय

मैनेजर ने जज साहब से पूछा-" साहब,मां को वृद्धाश्रम में छोड़ने का कोई खास कारण ?"जज साहब ने आंखों में आंसू के साथ अपने दिल की बात कहते हुए कहा -"मेरे घर में पत्नी और एक जवान बेटा और एक बेटी है। घर भी बहुत बड़ा है। लेकिन मेरी पत्नी का मां के साथ व्यवहार बहुत बुरा है। ना समय पर खाना देती है और ना दवाई। अब तो पत्नी के इशारे पर बच्चों ने भी मां के साथ बोलना बंद कर दिया है।यह सब कुछ देखकर मुझे बड़ा आघात लगता है। मां दिन भर रोती रहती है। मां की हालत मुझसे देखी और सही नहीं जाती। आखिर थककर मैंने मां को वृद्धाश्रम में छोड़ने का फैसला किया है। मैं अपराध बोध की भावना महसूस कर रहा हूं।" जज साहब इतना बोलते ही रो पड़े। मैनेजर ने पूछा -"आप तो विद्वान और न्यायाधीश है। कोर्ट में सत्य और तथ्य आधारित न्याय करते है। सबूत के आधार पर फैसला सुनाते है।न्यायाधीश होते हुए भी आप अपनी मां को न्याय दिलाने में असफल रहे है। आपके पास सारे सबूत हैं। आपने सब कुछ अपनी आंखों से देखा है। यदि आप अपनी मां को न्याय नहीं दिला सकते तो दूसरों को क्या न्याय देंगे?" मैनेजर के इन शब्दों ने जज साहब को भीतर से झकझोर दिया। वह वापस घर लौटे।रात भर जागते रहे। अपना कमरा बंद करके दो दिन तक लेटे रहे। ना कुछ खाया और ना कुछ पिया। कोर्ट भी नहीं गए। तीसरे दिन जज साहब कमरे से बाहर निकले। पत्नी और बच्चे तो घबराए हुए थे। पत्नी ने उन्हें खाने के लिए बुलाया। बच्चे भी उनका इंतजार करते रहे। जज साहब ने पत्नी को बुलाकर एक कागज उसके हाथ में थमा दिया। कागज की एक लाइन पढ़ते ही पत्नी के हाथों से थाली नीचे गिर गई। कागज में लिखा था कि मैं तुम्हें तलाक दे रहा हूं। बच्चों को बुलाकर कह दिया कि आज से

आश्रम के सभी बुजुर्गों और वृद्धों की आंखों में आंसू थे। सभी रो पड़े ।खुशी के आंसू के साथ सभी ने जज साहब को प्रणाम करके वृद्धाश्रम से विदा किया। "मां !तुम्हारे ऋण को मैं कैसे चूका पाउंगा यदि तू मुझसे नाराज है तो भगवान भी मुझ पर कैसे प्रसन्न होगा?"

मेरी सारी जायदाद और बैंक बैलेंस सब कुछ आपका है। मुझे कुछ भी नहीं चाहिए। बच्चों ने जबरदस्ती करके उन्हें कुर्सी पर बैठाया। हाथ जोड़कर इसका कारण पूछा तब जब साहब आंखों में अश्रुधारा के साथ बोले - "मेरी 70 साल की वृद्ध मां को वृद्धाश्रम छोड़ कर आया हूं। अजनबी लोगों के बीच छोड़ कर आया हूं। मां का क्या होगा इसका विचार करते ही शरीर कांपने लगता है। मां को खाना कौन देगा ? समय-समय पर दवाई कौन देगा ?मैं कुछ सोच ही नहीं सकता और आप सब मुझे कारण पूछ रहे हैं ?शर्म नहीं आती आपको ?आप सब संवेदनाहीन बन गए हैं।आप में से किसी ने भी मां के साथ अच्छा बर्ताव नहीं किया।इतना ही नहीं बात करना भी छोड़ दिया। आप सब यह भूल गए कि पूरा शहर इस जज को सलाम करता है। इस जज को बनाने में मां ने कितनी मेहनत की होगी ।पिताजी की मौत के बाद भी मां ने हीमत नहीं हारी । उसने दिन-रात ट्यूशन किए।अपने अरमानों को दबाकर मुझे पढ़ाया ।भगवान जैसी मां को मैं संभाल नहीं सका और उसे वृद्धाश्रम छोड़ आया।" अपने आप को कोसते हुए जज साहब बोले -"दूसरों को न्याय देने वाला जज आज अन्याय करके हार गया। मैं जज नहीं बल्कि एक बहुत बड़ा गुनहगार हूं। मैंने गुनाह किया है। मुझे शायद कानून तो माफ कर देगा किंतु ईश्वर के न्यायालय में मुझे माफी नहीं मिलेगी ।अब मैं अपने गुनाह का प्रायश्चित करने जा रहा हूं। मेरा सर्वस्व आपको सौप रहा हूं ।अब मैं मां के साथ आश्रम में रहूंगा और आश्रम में रहने वाले वृद्धों की सेवा करूंगा।" जज साहब ने अपनी पत्नी से कहा -"तूने मेरी मां को वृद्धाश्रम भेजा है।तू भी एक मां है। कल तुम्हारे बच्चे भी तुम्हें वृद्धाश्रम भेजेंगे तब तुम्हें मेरे इन शब्दों का अर्थ समझ में आएगा।" इतना कहकर जज साहब वृद्धाश्रम जाने के लिए घर से निकल पड़े। आधी रात को जज साहब को वृद्धाश्रम में देखकर सब चौक गए ।मां के कमरे में जाकर देखा तो मां सोई हुई थी। नजदीक जाकर देखा तो मां पूरे परिवार की तसवीर को अपनी छाती से लगा कर रोती रोती सो गई थी। आश्रम के सभी लोग भी जाग गए क्योंकि पीछे जज साहब की पत्नी और उनके बच्चे भी आ रहे थे। उन लोगों को भी महसूस हो रहा था कि उन्होंने बहुत बड़ा पाप किया है और मां को विनती कर रहे थे कि हमें माफ कर दे। हमसे बहुत बड़ा पाप हो गया है। हमें माफ कर दे और वापस घर लौटे। तब आश्रम का एक कर्मचारी बोला-"आपने मां को बहुत दुख दिया है ।क्या पता घर जाकर आप फिर से उनके साथ बुरा बर्ताव शुरू कर दे !यह सुनकर जज साहब की पत्नी के दिल को गहरी चोट लगी ।वह बोली-"बहन जी ,हम कबूल करते हैं कि हमने बहुत बड़ा पाप किया है लेकिन अब हम मां को मारने नहीं नया जीवन देने के लिए आए हैं ।आश्रम के सभी बुजुर्गों और वृद्धों की आंखों में आंसू थे। सभी रो पड़े ।खुशी के आंसू के साथ सभी ने जज साहब को प्रणाम करके वृद्धाश्रम से विदा किया। "मां!तुम्हारे ऋण को मैं कैसे चूका पाउंगा यदि तू मुझसे नाराज है तो भगवान भी मुझ पर कैसे प्रसन्न होगा?"

मेलेनिन हमारी त्वचा में मौजूद एक प्रकार का प्रोटीन है। यह ठीक वैसास ही है, जैसे कि केराटीन। मेलानिन कई मायनों में स्किन के लिए महत्वपूर्ण है। अगर यह ना हो तो व्यक्ति को स्किन कैंसर व अन्य स्किन संबंधी समस्याएं होने का खतरा बढ़ जाता है।

मेलानिन उत्पादन बढ़ने से स्किन नजर आती है सांवली

मिताली जैन

जब भी आप धूप में बाहर निकलते हैं या फिर लंबे समय तक धूप के संपर्क में आते हैं तो इससे स्किन सांवली नजर आने लगती है। आमतौर पर लोग स्किन का कालापन देखकर घबरा जाते हैं या फिर परेशान होते हैं। लेकिन क्या आपको पता है कि यह आपकी स्किन में मेलानिन की मात्रा बढ़ने से होता है। अब आप सोच रहे होंगे कि मेलानिन क्या है और इसके बढ़ने के कोई हानिकारक प्रभाव तो नहीं। तो चलिए आज हम आपको इस बारे में विस्तारपूर्वक बता रहे हैं-

क्या है मेलानिन

स्किन केयर एक्सपर्ट के अनुसार, मेलेनिन हमारी त्वचा में मौजूद एक प्रकार का प्रोटीन है। यह ठीक वैसा ही है, जैसे कि केराटीन। मेलानिन कई मायनों में स्किन के लिए महत्वपूर्ण है। अगर यह ना हो तो व्यक्ति को स्किन कैंसर व अन्य स्किन संबंधी समस्याएं होने का खतरा बढ़ जाता है।

क्या करता है मेलानिन

स्किन केयर एक्सपर्ट बताते हैं कि हमारे शरीर में मौजूद हर पोषक तत्व का अपना एक अलग कार्य है। ठीक उसी तरह, मेलानिन का मुख्य कार्य है सूर्य की हानिकारक अल्ट्रावायलट किरणों से स्किन की रक्षा करना। इसे एक तरह से स्किन का सुरक्षा कवच भी कहा जा सकता है। दरअसल, जब स्किन लंबे समय तक सूरज की किरणों के संपर्क में आती है तो इससे होने वाले बुरे प्रभावों से बचने के लिए मेलानिन नामक प्रोटीन का उत्पादन स्वतः ही बढ़ने लगता है। यह स्किन पर एक परत बना लेता है, जिससे स्किन काली नजर आती है। लेकिन मेलानिन की परत के कारण ही किरणें त्वचा में प्रवेश नहीं हो पातीं और अंदरूनी कोशिकाओं को नुकसान ना होने के कारण स्किन कैंसर व अन्य डिसीस होने की संभावना काफी हद तक कम हो जाती है।

बदाम से कम होगा मेलेनिन

अक्सर आपने सुना होगा कि बदाम खाने से हमारी याददाश्त तेज होती है। दरअसल बादाम में भारी मात्रा में अमीनो एसिड, फैटी एसिड और विटामिन ई मजबूर होता है। यह ना केवल हमारी याददाश्त को तेज करता है बल्कि हमारी त्वचा को गोरा बनाने में भी हमारी सहायता करता है। इस घरेलू उपाय के लिए आपको चार से पांच बदाम चाहिए होंगे। साथ ही आप एक छोटा चम्मच दूध ले लें। सबसे पहले आप चार से पांच बादाम को रात में भिगोकर रख दें। सुबह उठकर आप इन बदाम के छिलकों को उतार लें और इन्हें मिक्सर में पीस लें। अब आप इस पेस्ट में एक चम्मच दूध को मिला लीजिए और सांवली त्वचा वाले क्षेत्र पर इस पेस्ट को लगा ले। रेस लगाने के 15 मिनट बाद स्कोर ताजे पानी से धो लें और इस पेस्ट को हफ्ते में दो बार जरूर लगाएं।

यूं करें स्किन की रक्षा

वैसे तो स्किन अपनी रक्षा करने के लिए एक मेलानिन के रूप में एक सुरक्षा कवच तैयार कर लेती है। लेकिन फिर भी हमें कुछ ऐसे प्रयास करने चाहिए, जिससे स्किन को अतिरिक्त मेहनत ना करनी पड़े। मसलन, जब भी आप धूप में बाहर निकलें तो सनस्क्रीन अवश्य लगाएं ताकि स्किन को अतिरिक्त प्रोटेक्शन मिले। इसके अलावा यह कोशिश करें कि आपकी स्किन सीधी ही सूर्य की किरणों के संपर्क में ना आए। इसके लिए आप हाथों पर लॉन्ग ग्लव्स या फिर छाता आदि लेकर निकलें। साथ ही अगर संभव हो तो तेज धूप में बाहर निकलने से बचें।

भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम के पुरोधा थे प्रोफेसर उडुपी रामचंद्र राव

प्रोफेसर राव ने 1960 में अपने कॅरियर की शुरूआत की और उसके बाद से भारत में अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के विकास और संचार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। छुपे हुए प्राकृतिक संसाधनों की खोज करने में उनकी दूर-संवेदी तकनीकें बहुत उपयोगी सिद्ध हुईं। भारत में अंतरिक्ष विज्ञान ने बहुत प्रगति कर ली है। आज भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम अपनी उपलब्धियों से दुनिया भर के लिए एक मिसाल बन चुका है। भारतीय अंतरिक्ष विज्ञान की इस उड़ान में अनेक दिग्गज अंतरिक्ष वैज्ञानिकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

इस कड़ी में सबसे महत्वपूर्ण नाम है प्रोफेसर उडुपी रामचंद्र राव का। भारतीय अंतरिक्ष विज्ञान की विकास यात्रा में जिन क्षेत्रों का निर्णायक योगदान रहा, उनमें से अधिकांश का सरोकार उसी तकनीक से रहा है, जिस पर प्रोफेसर यू आर राव जीवनपर्यंत काम करते रहे। आज देश में सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा जो क्रांति आकार ले रही है हम उसकी बात करें या फिर रिमोट सेंसिंग, टेलीमेडिसिन या टेली एजुकेशन, सब में प्रो राव के काम की छाप दिखती है। प्रोफेसर राव का जन्म कर्नाटक के अडामारू में 10 मार्च 1932 को हुआ था। वह एक साधारण परिवार से ही संबंध रखते थे, परंतु अपने कठिन परिश्रम और विज्ञान के प्रति समर्पण ने उन्हें एक असाधारण व्यक्तित्व बना दिया। सफलता के नित नए सोपान चढ़ते हुए जहां उन्होंने प्रतिष्ठित भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन यानी इसरो के अध्यक्ष पद को सुशोभित किया तो वहीं देश के अंतरिक्ष सचिव के रूप में भी अपनी सेवाएं दीं जो विभाग सीधे प्रधानमंत्री के नेतृत्व में काम करता है। प्रोफेसर राव ने 1960 में अपने कॅरियर की शुरूआत की और उसके बाद से भारत में अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के विकास और संचार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। छुपे हुए प्राकृतिक संसाधनों की खोज करने में उनकी दूर-संवेदी तकनीकें बहुत उपयोगी सिद्ध हुईं। भारत की अंतरिक्ष और उपग्रह क्षमताओं के निर्माण तथा देश के विकास में उनके अनुप्रयोगों का श्रेय भी प्रोफेसर राव को दिया जाता है। उन्होंने 1972 में भारत में उपग्रह प्रौद्योगिकी का आगाज कर अपनी मेहनत से उसे एक नया आयाम प्रदान किया। प्रोफेसर राव के कुशल नेतृत्व में ही 1975 में पहले भारतीय उपग्रह आर्यभट्ट से लेकर 20 से अधिक उपग्रहों को डिजाइन किया गया, तैयार किया गया और अंतरिक्ष में प्रक्षेपित भी किया गया। भारत में प्रक्षेपास्त्र प्रौद्योगिकी के विकास को भी प्रोफेसर राव ने एक नई दिशा दी। यह उनके प्रयासों का ही परिणाम रहा कि 1992 में एएसएलवी का सफल प्रक्षेपण संभव हो सका। प्रसारण, शिक्षा, मौसम विज्ञान, सुदूर संवेदी तंत्र और आपदा चेतावनी के क्षेत्रों में अंतरिक्ष तकनीक के इस्तेमाल को बढ़ावा देने में राव का योगदान अतुलनीय है। प्रोफेसर राव को अंतरराष्ट्रीय एस्ट्रोनॉटिकल फेडरेशन ने प्रतिष्ठित ह्यद 2016 आईएएफ हॉल ऑफ फेमह्न में शामिल किया था। वहीं वर्ष 2013 में सोसायटी ऑफ सेटेलाइट प्रोफेशनल्स इंटरनेशनल ने प्रोफेसर राव को सेटेलाइट हॉल ऑफ फेम, वाशिंगटन का हिस्सा बनाया। भौतिक विज्ञान प्रयोगशाला (अहमदाबाद) की संचालन परिषद के अध्यक्ष रहे प्रोफेसर राव अंतरराष्ट्रीय तौर भी पर बहुत विख्यात रहे। अंतरिक्ष विज्ञान में अहम योगदान के लिए भारत सरकार ने प्रोफेसर यू आर राव को 1976 में तीसरे सर्वोच्च नागरिक सम्मान पद्म भूषण से सम्मानित किया। वर्ष 2017 में उन्हें देश का दूसरा सर्वोच्च नागरिक सम्मान पद्म विभूषण दिया गया। देश के मूर्धन्य वैज्ञानिकों में से एक रहे प्रोफेसर राव यदि जीवित होते तो 10 मार्च,2021 को अपना 89वां जन्मदिन मनाते। आज वह भले ही हमारे बीच में न हों, लेकिन विज्ञान के क्षेत्र में अपने अतुलनीय योगदान से उन्होंने एक ऐसी समृद्ध विरासत छोड़ी है, जिसे उनके अनुयायी और समृद्ध करके उनकी परंपरा को आगे बढ़ा रहे हैं।

लालच में अंधा

टिक-टॉक, वाट्सएप, ट्विटर, यूट्यूब, इंस्टाग्राम जैसी सूचना प्रौद्योगिकी के मोहजाल ने तुम्हें बांध दिया है। कुछ कहने के लिए वोडाफोन, एयरटेल, जियो और रहने के लिए एप्पल, सैमसंग, वीवो, ओप्पो, वन प्लस का मुँह ताकती हो। हे धरती माँ! तुम बहुत बदल गयी हो। अब पहले जैसी बात नहीं रही। वैश्वीकरण के नाम पर मोबाइलों, लैपटॉप और कंप्यूटरों में सिमट गयी हो। अब तुम गोल नहीं सपाट हो। एक छोटा-सा डिजिटल गाँव हो। कॉपोर्रेट दुनिया की गुलाम हो। गूगल, फेसबुक, अमेजान की मोहताज हो। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के घेरे में रोबोट बनकर खेल रही हो। कभी ड्रोन तो कभी क्लाउड की दुनिया में घूम रही हो। आंकड़े, दस्तावेज, श्रव्य-दृश्य सामग्री भंडारण करने वाली गोदाम हो। उबर-ओला टैक्सी बनकर इधर-उधर चक्कर काट रही हो।

डॉ. सुरेश कुमार मिश्रा

टिक-टॉक, वाट्सएप, ट्विटर, यूट्यूब, इंस्टाग्राम जैसी सूचना प्रौद्योगिकी के मोहजाल ने तुम्हें बांध दिया है। कुछ कहने के लिए वोडाफोन, एयरटेल, जियो और रहने के लिए एप्पल, सैमसंग, वीवो, ओप्पो, वन प्लस का मुँह ताकती हो। अब तुम्हारा वैलिडिटी पीरियड भी फिक्स्ड होने लगा है। प्री-पेड और पोस्ट पेड की तरह जीने की आदी हो चुकी हो। कॉपोर्रेट कॉरिडोर के आंगन में इलेक्ट्रॉनिक गजटों से खेलने लगी हो। धीरे-धीरे खत्म होने लगी हो। दुर्भाग्य यह है कि तुम्हारी सेटिंग्स में कंट्रोल जेड का बटन भी नहीं है। तुम चाहकर भी पहले जैसी नहीं बन सकती।

अब विश्व समाप्ति की शुरूआत हो चुकी है। अंतिम संघर्ष का शंखनाद हो चुका है। न्यूटन, थामस अल्वा एडिसन, ग्राहमबेल, अल्बर्ट स्विट्जर, अलेगजांडर फ्लेमिंग की सेवाओं को तुम चाह कर भी नहीं भुला सकती। आइनस्टीन की आत्मा को अब कभी शांति नहीं मिल सकती। ट्रूमन, मैन हॉटन को यह दुनिया कभी क्षमा नहीं कर सकती। मानव सभ्यता का पतन नैतिक मूल्यों के ह्रास का महापाप है! हे धरती माँ! यह सब लालच में अंधा होकर तेजी से भागने का परिणाम है। यह वह शोक है जिसे तौला नहीं जा सकता। यह कई दिनों से जमा हुआ हमारी फूहड़ सोच का कूड़ा-कचरा है। मनुष्य ही सबसे बड़ा विश्वरोग है! महामारी है! आज तुम्हें सेल्फ आइसोलेशन की आवश्यकता है। यह विज्ञान की अति का दुष्परिणाम है। जहाँ पंचइंद्रियाँ वेंटिलेटर पर और समाज अलग-थलग जीने को मजबूर है। आँखें आँसू बनकर, प्रकृति क्षत-विक्षत होकर अपनी चरमावस्था पर पहुँच चुकी है। यहाँ सब अनिश्चित है। सभी अंतहीन संभावनाओं की खोज में लगे हैं। जो सच है वह एकमात्र मृत्यु है। आदमी और आदमी के बीच, आदमी और प्रकृति के बीच जो दैत्य बनकर खड़ा है उसे कॉपोर्रेट जगत कहते हैं। यह जगत शहरों को कभी सोने और गाँवों को कभी जागने नहीं देता। मल्टी नेशनल कंपनियों की आड़ में इंसानी खून पीने वाले ये विषवृक्ष हैं। महाराक्षस बनकर धरती पर उत्पात मचाना चाहते हैं। लेन-देन की दुनिया में मनुष्य की मानवता कब की समाप्त हो चुकी है। सोशल मीडिया की उंगलियों पर ज्ञानेंद्रियाँ नाच रही हैं। अब हम मानव नहीं, स्वयं को झांसा देने वाले स्मार्ट सिटी के आदिमानव हैं। अब न मानवीय कणों का पता है, न शक्ति का ठिकाना। न रूप है न दिशा। कहाँ आना है कहाँ जाना है, पता नहीं। अब हम मनुष्य नहीं रक्त कणों में बिखरे हुए छोटे-छोटे द्वीप हैं। हमें अपने सिवाय कोई दिखायी नहीं देता।

माइक्रोस्कोप की पकड़ से बचने की कोशिश करने वाला कोरोना आज हमारे अस्तित्व पर प्रश्न चिह्न लगा रहा है। अनादि काल से चले आ रहे हमारे ज्ञान-विज्ञान को ठेंगा दिखा रहा है। हमें ताना मार रहा है। विज्ञान व तकनीक के शंख-चक्र धारण किए मनुष्य को उसकी औकात दिखा रहा है। वह मानव समाज की छाती पर पाँव धरकर हमें शर्मसार कर रहा है। हे भगवान! आज तेरे बनाये संसार की हालत क्या हो गई है। हे घमंडी होमोसेंपियन्स! मात्र हाथ धोने और मुँह पर मास्क लगा लेने से तुम्हारे किए पाप धुलने वाले नहीं हैं। तुम्हें यह याद रखना होगा कि मनुष्य और प्रकृति के बीच अनूठा और अटूट संबंध है। यह धरती केवल मनुष्यों की नहीं है। बल्कि यह वृक्ष, घोंसले, चींटी और अनंत जीवराशियों का देवालय है। इनके बिना तुम अधूरे हो। प्रकृति अनादि, अनंत, अजर, अमर और शाश्वत है।

स्वामी दयानंद सरस्वती ने हिन्दुओं के उद्धार हेतु चलाया शुद्धि आंदोलन

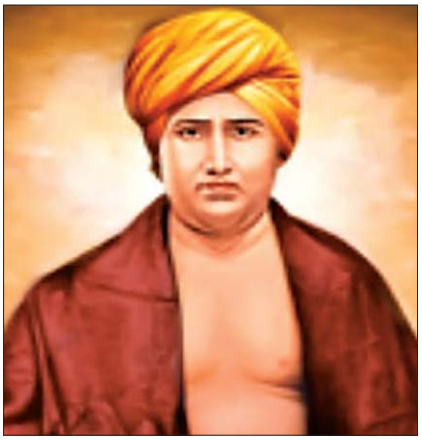

स्वामी दयानंद सरस्वती ने स्वतंत्रता आंदोलन में अग्रणी भूमिका निभायी। ऐसा माना जाता है कि 1857 में स्वतंत्रता-संग्राम में भी स्वामी जी ने राष्ट्र के लिए जो कार्य किया वह सदैव मार्गदर्शन का काम करता रहेगा। आज स्वामी दयानंद सरस्वती जयंती है। स्वामी जी का जन्म फाल्गुन कृष्ण पक्ष की दशमी को हुआ था तथा उन्होंने समाज सुधार आंदोलन हेतु प्रयास किए। पढ़िए प्रज्ञा पाण्डेय की स्पेशल रिपोर्ट....

स्वामी जी का प्रारम्भिक जीवन

भारत के प्रमुख समाज-सुधारक स्वामी दयानंद सरस्वती का जन्म गुजरात के काठियावाड़ जिले में फाल्गुन मास की कृष्ण दशमी को 1824 में हुआ था। मूल नक्षत्र में जन्म लेने के कारण पिता ने उनका नाम मूलशंकर रखा दिया था। उनकी माता का नाम अमृतबाई और पिता का नाम अंबाशकर तिवारी था। उन्होंने 1846 में 21 वर्ष की अवस्था में सन्यास धारण कर अपने घर से विदा ले ली थी। उनके गुरु विरजानंद थे। तिथि के अनुसार उनकी जयंती 8 मार्च 2021 को है।

स्वामी दयानंद सरस्वती के बारे में जाने रोचक बातें

स्वामी जी ब्राह्मण घर में जन्म लेने के कारण सदैव अपने पिता जी के साथ धार्मिक कार्यक्रमों में सम्मिलित होते थे। एक बार वह अपने पिता के साथ शिवरात्रि के कार्यक्रम में शामिल हुए थे। जहां रात्रि जागरण के दौरान उन्होंने देखा की भगवान शिव के भोग की थाली को चारों तरफ से चूहों ने घेर रखा है। यह देखकर दयानंद सरस्वती का मन बहुत उद्वेलित हुआ। साथ ही छोटी बहन तथा चाचा की हैजे से मौत ने उनके अंदर के वैराग्य को जगा दिया और वह ज्ञान की खोज में निकल पड़े।

आर्य समाज के बारे में कुछ खास बातें

स्वामी दयानंद सरस्वती जी ने सन 1875 में 10 अप्रैल गुड़ी पड़वा के दिन मुंबई में आर्य समाज की स्थापना की थी। 1892-1893 ई. में आर्य समाज में दो भागों में विभाजित हो गई। उसके बाद दो दलों में से एक ने पाश्चात्य शिक्षा का समर्थन किया। इस दल में लाला हंसराज और लाला लाजपत राय इत्यादि दो प्रमुख नेता थे। इन्होंने 'दयानन्द एंग्लो-वैदिक कॉलेज' की स्थापना की। इसी प्रकार दूसरे दल ने पाश्चात्य शिक्षा का विरोध किया जिसके परिणामस्वरूप विरोधी दल के नेता स्वामी श्रद्धानंद जी ने 1902 ई. में हरिद्वार में एक गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की। इस संस्था में वैदिक शिक्षा प्राचीन पद्धति से दी जाती थी। संवत 1895 में फाल्गुन कृष्ण के दिन शिवरात्रि को उनके जीवन में नया मोड़ आया। उन्हें नया बोध प्राप्त हुआ। वे घर से निकल गए और गुरु विरजानन्द के पास पहुंचे। गुरुवर ने विभिन्न ग्रंथों का अध्ययन कराया। साथ ही उन्होंने गुरु दक्षिणा मांगा- विद्या को सफल कर दिखाओ, सत्य शास्त्रों का उद्धार करो, परोपकार करो, मत मतांतरों की अविद्या को मिटाओ, वैदिक धर्म का आलोक सर्वत्र विकीर्ण करो तथा वेद के प्रकाश से इस अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करो।

दयानंद सरस्वती की आंदोलन में रही महत्वपूर्ण भूमिका

भारत में फैली कुरीतियों को दूर करने के लिए 1876 में हरिद्वार के कुंभ मेले के अवसर पर पाखण्डखंडिनी पताका फहराकर पोंगा-पंथियों को चुनौती दी थी। आर्य समाज एक हिन्दू सुधार आंदोलन है। इस समाज का उद्देश्य वैदिक धर्म को पुनः स्थापित कर संपूर्ण हिन्दू समाज को एकसूत्र में बांधना है। आर्य समाज जातिप्रथा, छुआछूत, अंधभक्ति, मूर्तिपूजा, बहुदेववाद, अवतारवाद, पशुबलि, श्राद्ध, जंत्र, तंत्र-मंत्र, झूठे कर्मकाण्ड आदि के सख्त खिलाफ है ।

शुद्धि आंदोलन में स्वामी जी रही अहम भूमिका

स्वामी जी ने उन हिन्दूओं हेतु शुद्धि आंदोलन चलाया जो किसी कारण वश मुस्लिम या ईसाई बन गए थे। उन्होंने उन लोगों को पुनः हिन्दू बनने की प्रेरणा देकर शुद्धि आंदोलन चलाया। दयानंद सरस्वती द्वारा चलाए गए 'शुद्धि आन्दोलन' के अंतर्गत उन लोगों को पुनः हिन्दू धर्म में आने का मौका मिला जिन्होंने किसी कारणवश इस्लाम या ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था।

दयानंद सरस्वती की रचनाएं

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने कुछ विशेष प्रकार की पुस्तकें भी लिखी थी उनमें सत्यार्थ प्रकाश, यजुर्वेद भाष्य, पंचमहायज्ञ विधि, ऋग्वेद भाष्य, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदांग प्रकाश, आर्याभिविनय, संस्कार विधि, गो-करुणानिधि, संस्कृतवाक्यप्रबोध, भ्रान्ति निवारण, अष्टाध्यायी भाष्य, और व्यवहारभानु प्रमुख है ।

स्वतंत्रता आंदोलन में रही महत्वपूर्ण भूमिका

स्वामी दयानंद सरस्वती ने स्वतंत्रता आंदोलन में अग्रणी भूमिका निभायी। ऐसा माना जाता है कि 1857 में स्वतंत्रता-संग्राम में भी स्वामी जी ने राष्ट्र के लिए जो कार्य किया वह सदैव मार्गदर्शन का काम करता रहेगा। दयानंद सरस्वती जी ने अंग्रेजों के खिलाफ कई अभियान चलाए "भारत, भारतीयों का है' उन्हीं में से एक आंदोनल था। उन्होंने अपने प्रवचनों के द्वारा भारतवासियों को राष्ट्रीयता का उपदेश दिया तथा भारतीयों को देश पर मर मिटने के लिए प्रेरित करते रहे।

साधारण से दिखने वाले महान वैज्ञानिक थे

अल्बर्ट आइंस्टीन

1914 से 1932 तक बर्लिन में रहने के दौरान हिटलर की यहूदियों के प्रति घृणा को समय रहते भांप कर अल्बर्ट आइंस्टीन अमेरिका चले गये।

अल्बर्ट आइंस्टीन (जर्मन उच्चारण आइनश्टाइन) का जन्म, 14 मार्च 1879 को तत्कालीन जर्मन साम्राज्य के उल्म शहर में रहने वाले एक यहूदी परिवार में हुआ था। उल्म आज जर्मनी के जिस बाडेन-व्यूर्टेमबेर्ग राज्य में पड़ता है, वह उस समय जर्मन साम्राज्य की व्यूर्टेमबेर्ग राजशाही का शहर हुआ करता था। लेकिन अल्बर्ट आइंस्टीन का बचपन उल्म के बदले बवेरिया की राजधानी म्यूनिख में बीता। परिवार उनके जन्म के एक ही वर्ष बाद म्यूनिख में रहने लगा था। अल्बर्ट आइंस्टीन होनहार बिरवान के होत चीकने पात वाली कहावत चरितार्थ करते थे। भाषाएं छोड़ कर हर विषय में, विशेषकर विज्ञान में वे बचपन से ही बहुत तेज थे। विज्ञान की किताबें पढ़-पढ़ कर स्कूली दिनों में ही अल्बर्ट आइंस्टीन सामान्य विज्ञान के अच्छे-खासे ज्ञाता बन गए थे। जर्मनी के अलावा वे उसके पड़ोसी देशों स्विट्जरलैंड और ऑस्ट्रिया में भी वहां के नागरिक बन कर रहे। 1914 से 1932 तक बर्लिन में रहने के दौरान हिटलर की यहूदियों के प्रति घृणा को समय रहते भांप कर अल्बर्ट आइंस्टीन अमेरिका चले गये। वहीं, 18 अप्रैल 1955 के दिन उन्होंने प्रिन्स्टन के एक अस्पताल में अंतिम सांस ली।

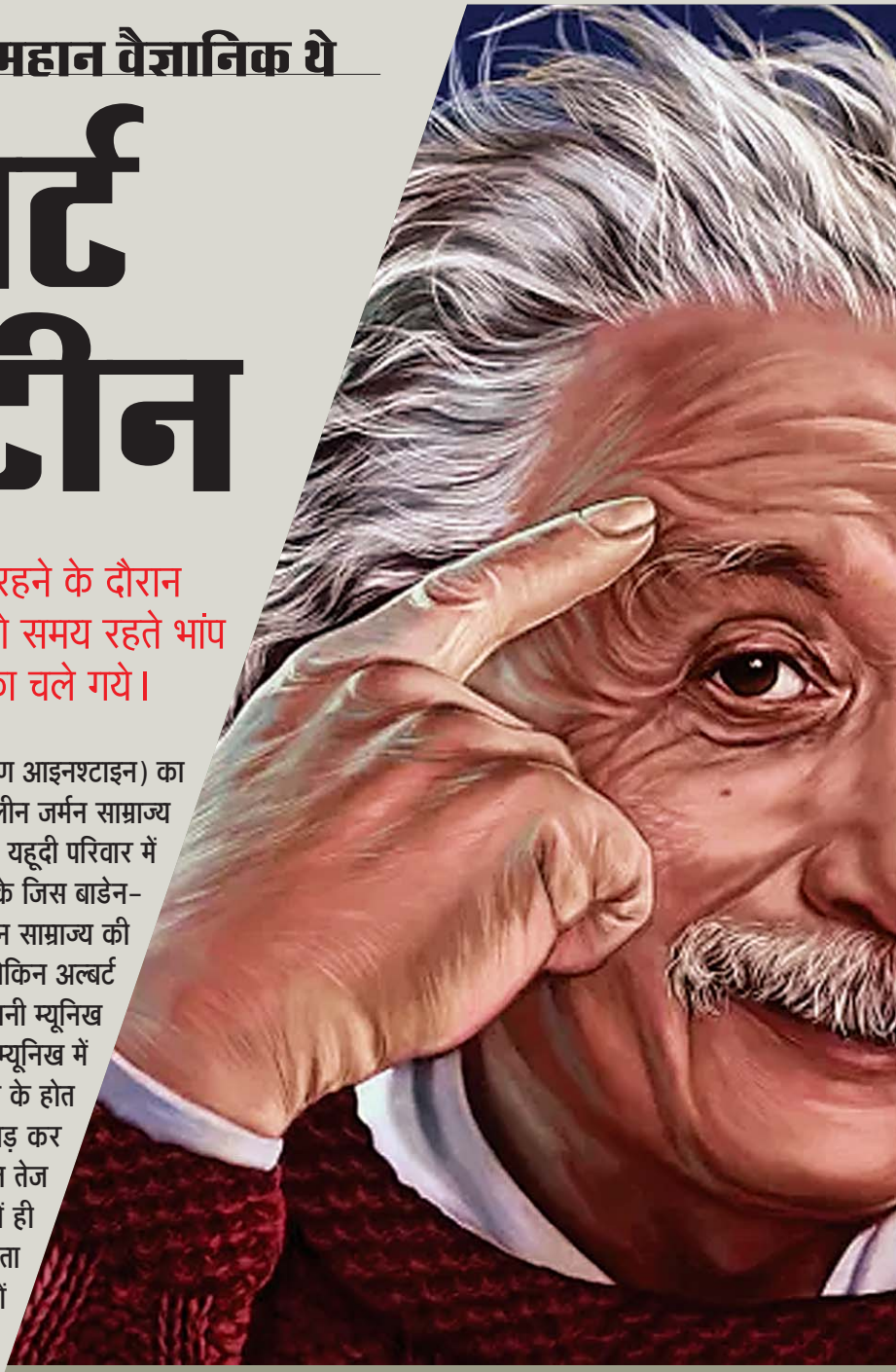

शवपरीक्षक डॉक्टर ने आइंस्टीन की आंखों और मस्तिष्क को यह जानने के लिए अंत्येष्टि से पहले ही निकाल लिया कि उनके मस्तिष्क की बनावट में उनकी असाधारण प्रतिभा का कोई रहस्य तो नहीं छिपा है। उनके परिजनों ने मस्तिष्क के साथ इस प्रयोग की अनुमति दे दी थी। पर ऐसी कोई असाधारण संरचना उनके मस्तिष्क में नहीं मिली। मस्तिष्क का एक बड़ा हिस्सा शिकागो के नेशनल म्यूज़ियम ऑफ हेल्थ ऐन्ड मेडिसिन (राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं औषधि संग्राहलय) में आज भी देखा जा सकता है।

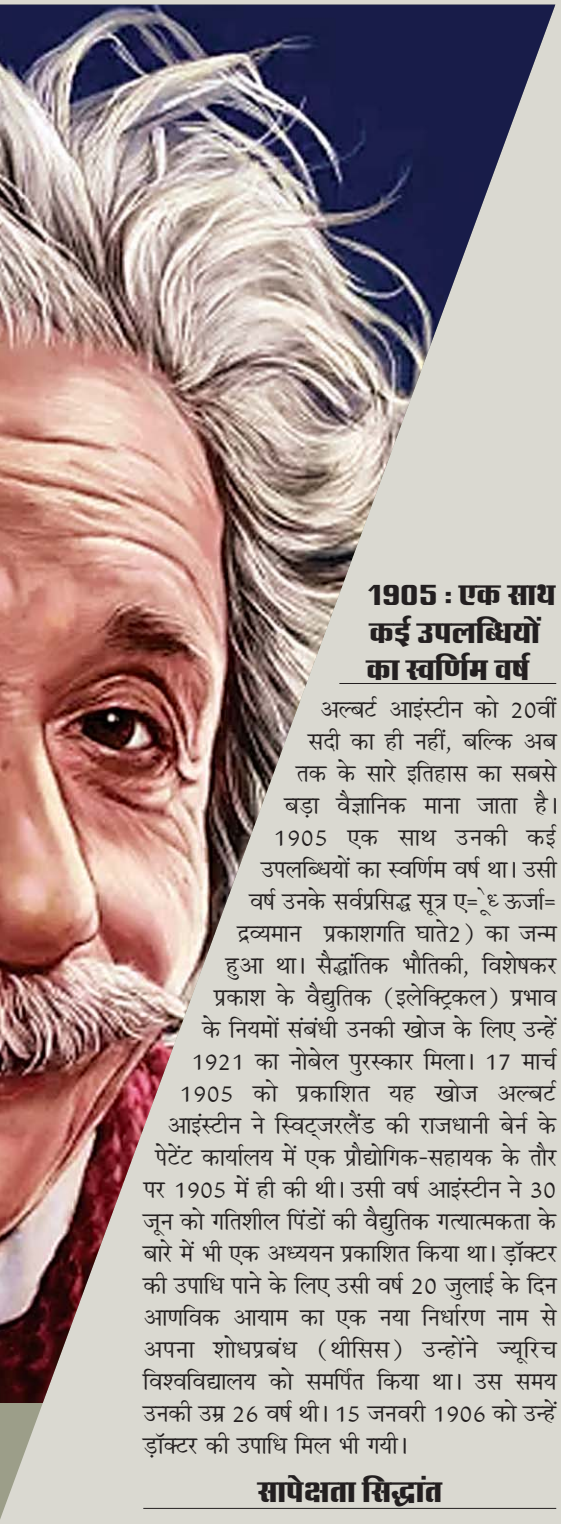

ब्रह्मसूत्र की खोज

समग्र क्षेत्र सिद्धांत वाला ब्रह्मसूत्र खोजने का काम अल्बर्ट आइंस्टीन ने वास्तव में 1930 में बर्लिन में ही शुरू कर दिया था। उस समय उन्होंने इस बारे में आठ पृष्ठों का एक लेख भी लिखा था, जिसे उन्होंने कभी प्रकाशित नहीं किया। इस लेख के अब तक सात पृष्ठ मिल चुके थे, एक पृष्ठ नहीं मिल रहा था। आज उनके जन्म की 140वीं वर्षगांठ से कुछ ही दिन पहले यह खोया हुआ पृष्ठ भी मिल गया है। इसराइल में जेरूसलम के हिब्रू विश्वविद्यालय ने 13 मार्च को बताया कि उसने आइंस्टीन से संबंधित दस्तावेजों का एक संग्रह हाल ही में खरीदा है। समग्र क्षेत्र सिद्धांत वाले उनके लेख का खोया हुआ पृष्ठ, दो ही सप्ताह पहले प्राप्त हुए इसी संग्रह में मिला है। अपने लेख में आइंस्टीन ने हस्तलिखित समीकरणों ओर रेखाचित्रों का खूब प्रयोग किया है। इस संग्रह में 110 पृष्ठों के बराबर सामग्री है। 1935 में उनके पुत्र हांस अल्बर्ट के नाम लिखा एक पत्र भी है। इस पत्र में उन्होंने जर्मनी में हिटलर की नाजी पार्टी के शासन को लेकर अपनी चिंताएं भी व्यक्त की हैं। एक दूसरा पत्र भी है, जो आइंस्टीन ने स्विट्जरलैंड में रहने वाले अपने एक इतालवी इंजीनियर-मित्र को लिखा था।

1905 : एक साथ कई उपलब्धियों का स्वर्णिम वर्ष

अल्बर्ट आइंस्टीन को 20वीं सदी का ही नहीं, बल्कि अब तक के सारे इतिहास का सबसे बड़ा वैज्ञानिक माना जाता है। 1905 एक साथ उनकी कई उपलब्धियों का स्वर्णिम वर्ष था। उसी वर्ष उनके सर्वप्रसिद्ध सूत्र ए=ॅू ध ऊर्जा= द्रव्यमान प्रकाशगति घाते2) का जन्म हुआ था। सैद्धांतिक भौतिकी, विशेषकर प्रकाश के वैद्युतिक (इलेक्ट्रिकल) प्रभाव के नियमों संबंधी उनकी खोज के लिए उन्हें 1921 का नोबेल पुरस्कार मिला। 17 मार्च 1905 को प्रकाशित यह खोज अल्बर्ट आइंस्टीन ने स्विट्जरलैंड की राजधानी बेर्न के पेटेंट कार्यालय में एक प्रौद्योगिक-सहायक के तौर पर 1905 में ही की थी। उसी वर्ष आइंस्टीन ने 30 जून को गतिशील पिंडों की वैद्युतिक गत्यात्मकता के बारे में भी एक अध्ययन प्रकाशित किया था। ड़ॉक्टर की उपाधि पाने के लिए उसी वर्ष 20 जुलाई के दिन आणविक आयाम का एक नया निर्धारण नाम से अपना शोधप्रबंध (थीसिस) उन्होंने ज्यूरिच विश्वविद्यालय को समर्पित किया था। उस समय उनकी उम्र 26 वर्ष थी। 15 जनवरी 1906 को उन्हें ड़ॉक्टर की उपाधि मिल भी गयी।

सापेक्षता सिद्धांत

अल्बर्ट आइंस्टीन के नाम को जिस चीज ने अमर बना दिया, वह था उनका सापेक्षता सिद्धांत (थ्योरी ऑफ रिलेटिविटी)। उन्होंने गति के स्वरूप का अध्ययन किया और कहा कि गति एक सापेक्ष अवस्था है। आइंस्टीन के मुताबिक ब्रह्मांड में ऐसा कोई स्थिर प्रमाण नहीं है, जिसके द्वारा मनुष्य पृथ्वी की निरपेक्ष गति या किसी प्रणाली का निश्चय कर सके। गति का अनुमान हमेशा किसी दूसरी वस्तु को संदर्भ बना कर उसकी अपेक्षा स्थिति-परिवर्तन की मात्रा के आधार पर ही लगाया जा सकता है। 1907 में प्रतिपादित उनके इस सिद्धांत को सापेक्षता का विशिष्ट सिद्धांत कहा जाने लगा। आइंस्टीन का कहना था कि सापेक्षता के इस विशिष्ट सिद्धांत को प्रकाशित करने के बाद एक दिन उनके दिमाग में एक नया ज्ञानप्रकाश चमका। उनके शब्दों में मैं बेर्न के पेटेंट कार्यालय में आरामकुर्सी पर बैठा हुआ था। तभी मेरे दिमाग में एक विचार कौंधा, यदि कोई व्यक्ति बिना किसी अवरोध के ऊपर से नीचे गिर रहा हो तो वह अपने आप को भारहीन अनुभव करेगा। मैं भौचक्का रह गया। इस साधारण-से विचार ने मुझे झकझोर दिया। वह मुझे उसी समय से गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत की ओर धकेलने लगा।

हिटलर की तानाशाही

1932 में आइंस्टीन के अमेरिका चले जाने के बाद 1933 में जर्मनी पर हिटलर की तानाशाही शुरू हो गयी। 10 मई 1933 को उसके प्रचारमंत्री योजेफ गोएबेल्स ने हर प्रकार के यहूदी साहित्य की सार्वजनिक होली जलाने का अभियान छेड़ दिया। आइंस्टीन की लिखी पुस्तकों की भी होली जली। ह्यजर्मन राष्ट्र के शत्रुओंह्न की एक सूची बनी, जिसमें उस व्यक्ति को पांच हजार डॉलर का पुरस्कार देने की घोषणा भी की गयी, जो आइंस्टीन की हत्या कर देगा। आइंस्टीन तब तक अमेरिका के प्रिन्स्टन शहर में बस गये थे। वहां वे गुरुत्वाकर्षण वाले अपने सामान्य सापेक्षता सिद्धांत के नियमों तथा विद्युत-चुम्बकत्व के नियमों के बीच मेल बैठाते हुए एक ह्यसमग्र क्षेत्र सिद्धांतह्न (यूनिफाइड फील्ड थ्योरी) का प्रतिपादन करने में जुट गये। इसके लिए वे किसी ह्यब्रह्मसूत्रह्न जैसे एक ऐसे गणितीय समीकरण पर पहुंचना चाहते थे, जो दोनों को एक सूत्र में पिरोते हुए ब्रहमांड की सभी शक्तियों और अवस्थाओं की व्याख्या करने का मूलाधार बन सके। वे मृत्युपर्यंत इस पर काम करते रहे, पर न तो उन्हें सफलता मिल पायी और न आज तक कोई दूसरा वैज्ञानिक यह काम कर पाया है।

गुरुत्वाकर्षण प्रभाव

इस छोटे-से विचार पर कई वर्षों के चिंतन-मनन और गणीतीय समीकरणों के आधार पर 1916 में आइंस्टीन ने एक नई थ्योरी दी। उन्होंने कहा कि ब्रहमांड में किसी वस्तु को खींचने वाला जो गुरुत्वाकर्षण प्रभाव देखा जाता है, उसका असली कारण यह है कि हर वस्तु अपने द्रव्यमान (सरल भाषा में भार) और आकार के अनुसार अपने आस-पास के दिक्-काल (स्पेस-टाइम) में मरोड़ पैदा कर देती है। वैसे तो हर वस्तु और हर वस्तु की गति दिक्-काल में यह बदलाव लाती है, लेकिन बड़ी और भारी वस्तुएं तथा प्रकाश की गति के निकट पहुंचती गतियां कहीं बड़े बदलाव पैदा करती हैं। आइंस्टीन ने सामान्य सापेक्षता के अपने इस क्रांतिकारी सिद्धांत में दिखाया कि वास्तव में दिक् के तीन और काल का एक मिलाकर ब्रह्माण्ड में चार आयामों वाला दिक्-काल है, जिसमें सारी वस्तुएं और सारी ऊर्जाएं अवस्थित हैं। उनके मुताबिक समय का प्रवाह हर वस्तु के लिए एक जैसा हो, यह जरूरी नहीं है। आइंस्टीन का मानना था कि दिक्-काल को प्रभावित कर के उसे मरोड़ा, खींचा और सिकोड़ा भी जा सकता है। ब्रह्मांड में ऐसा निरंतर होता रहता है।

पुत्र के नाम पत्र

आइंस्टीन की पहली पत्नी मिलेवा मारिच सर्बिया की थीं। दोनों बेर्न में अपनी पढ़ाई के दिनों में एक-दूसरे से परिचित हुए थे। उनसे उनके दो पुत्र थे हांस अल्बर्ट और एदुआर्द। शादी से पहले की दोनों की एक बेटी भी थी लीजरिल। लेकिन उसके बारे में दोनों ने चुप्पी साध रखी थी, इसलिए इससे अधिक कुछ पता नहीं है। पुत्र हांस अल्बर्ट के नाम पत्र में जर्मन भाषा में आइंस्टीन ने लिखा था, प्रिन्स्टन, 11 जनवरी 1935। मैं गणित रूपी राक्षस के पंजे में इस बुरी तरह जकड़ा हुआ हूं कि किसी को निजी चिट्ठी लिख ही नहीं पाता। मैं ठीक हूं, दीन-दुनिया से विमुख हो कर काम में व्यस्त रहता हूं। निकट भविष्य में मैं यूरोप जाने की नहीं सोच रहा, क्योंकि मैं वहां हो सकने वाली परेशानियों को झेलने के सक्षम नहीं हूं। वैसे भी, एक बूढ़ा बालक होने के नाते मुझे सबसे परे रहने का अधिकार भी तो है ही।

अमेरिकी संग्रहकर्ता से खरीदा

जेरूसलेम के हिब्रू विश्वविद्यालय में आइनश्टइन से संबंधित लेखागार के परामर्शदाता हानोख गूटफ्रौएन्ड ने मीडिया को बताया कि इस संग्रह के अधिकांश दस्तावेज शोधकों को फोटोकॉपी या नकलों के रूप में पहले से ज्ञात रहे हैं। यह बात अलग है कि कुछ कॉपियां अच्छी थीं और कुछ खराब थीं। नया प्राप्त संग्रह अब तक एक अमेरिकी संग्रहकर्ता के पास था। समग्र क्षेत्र सिद्धांत वाले उनके लेख में शब्द बहुत कम हैं, गणित के सूत्रों और समीकरणों की भरमार है। यह नहीं बताया गया कि इस संग्रह को पाने के लिए कितना पैसा देना पड़ा है। अल्बर्ट आइंस्टीन अपने समय में संसार के सबसे प्रतिष्ठित और प्रशंसित यहूदी थे, पर वे किसी ऊंचे पद के भूखे कभी नहीं थे। 1948 में जब इजरायल की एक यहूदी देश के रूप में स्थापना हुई, तो उनके सामने इसका राष्ट्रपति बनने का प्रस्ताव भी रखा गया था। उन्होंने इसे स्वीकार नहीं किया। इसके बदले अपनी वसीयत में उन्होंने लिखा कि पत्रों, लेखों, पांडुलिपियों इत्यादि के रूप में उनकी सारी दस्तावेजी विरासतों की नकलें, न कि मूल प्रतियां, जेरुसलम के हिब्रू विश्वविद्यालय को मिलनी चाहिए। इन दस्तावेजों से पता चलता है कि अमेरिका पहुंचने के बाद जर्मनी में रह गये अपने संबंधियों और परिजनों को वे न केवल पत्र लिखा करते थे, उन्हें जर्मनी से बाहर निकलने में सहायता देने का भी प्रयास करते थे।

बहन के नाम पत्र 30 हजार यूरो में नीलाम हुआ

हिटलर के सत्ता में आने से 10 साल पहले ही आइंस्टीन ने भांप लिया था जर्मनी अपने यहूदियों के लिए कितना बड़ा अभिशाप बन सकता है। अपनी बहन माया के नाम 1922 में लिखे उनके ऐसे ही

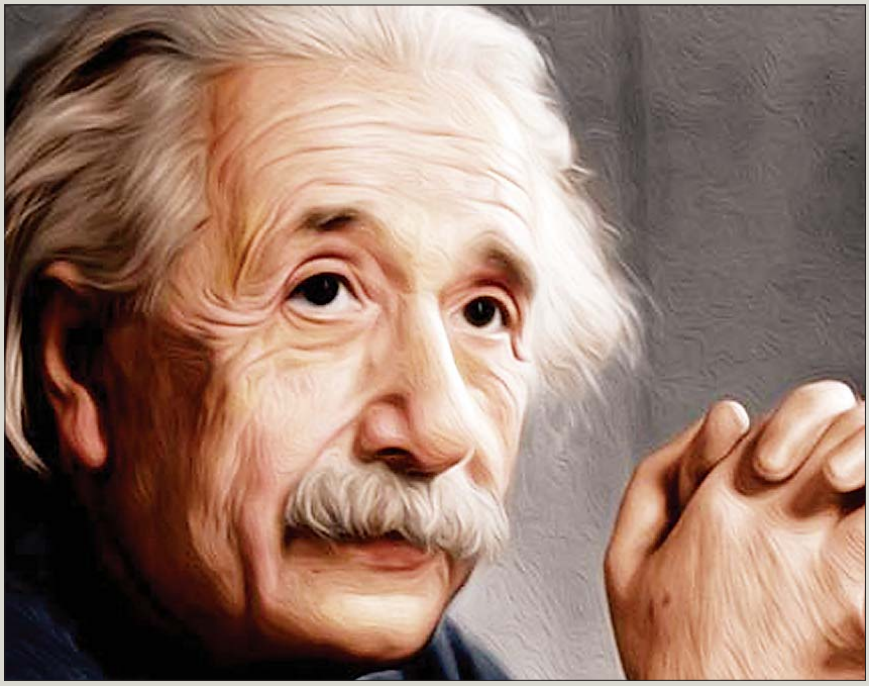

एक पत्र की जब नीलामी हुई, तो वह 30 हजार यूरो में बिका। इस पत्र में एक जगह उन्होंने लिखा है, यहूदियों से घृणा करने वाले अपने जर्मन सहकर्मियों के बीच मैं तो ठीक-ठाक ही हूं। यहां बाहर कोई नहीं जानता कि मैं कौन हूं। यह पत्र संभवतः जर्मनी के ही कील नगर से लिखा गया था। उन दिनों आइंस्टीन बर्लिन के सम्राट विलहेल्म इंस्टीट्यूट में भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर थे। उनके पत्र से यही पता चलता है कि अति उच्च शिक्षा प्राप्त जर्मन भी, हिटलर के आने से पहले ही यहूदियों से कितनी घृणा करने लगे थे। उनके प्रयासों से उनकी बहन माया भी 1939 में प्रिन्स्टन पहुंच गईं, पर नाज़ियों ने उनके पति को नहीं जाने दिया। माया 1951 में अपनी मृत्यु तक उन्हीं के साथ रह रही थी।

अमेरिकी राष्ट्रपति के नाम पत्र

दूसरा विश्व युद्ध शुरू होने से कुछ ही दिन पहले, अगस्त 1939 में, आइंस्टीन ने अमेरिका में रह रहे हंगेरियाई परमाणु वैज्ञानिक लेओ ज़िलार्द के कहने में आ कर एक पत्र पर दस्तखत कर दिए। यह पत्र अमेरिकी राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट के नाम लिखा गया था। इसमें रूजवेल्ट से कहा गया था कि नाजी जर्मनी एक बहुत ही विनाशकारी नये प्रकार का बम बना रहा है या संभवतः बना चुका है। अमेरिकी गुप्तचर सूचनाएं भी कुछ इसी प्रकार की थीं, इसलिए अमेरिकी परमाणु बम बनाने की मैनहटन परियोजना को हरी झंडी दिखा दी गयी। अमेरिका के पहले दोनों बम 6 और 9 अगस्त 1945 को जापान के हिरोशिमा और नागासाकी शहर पर गिरे। आइंस्टीन को इससे काफी आघात पहुंचा। अपने एक पुराने मित्र लाइनस पॉलिंग को 16 नवंबर 1954 को लिखे अपने एक पत्र में खेद प्रकट करते हुए उन्होंने लिखा, मैं अपने जीवन में तब एक बड़ी गलती कर बैठा, जब मैंने राष्ट्रपति रूजवेल्ट को परमाणु बम बनाने की सलाह देने वाले पत्र पर अपने हस्ताक्षर कर दिये, हलांकि इसके पीछे यह औचित्य भी था कि जर्मन एक न एक दिन उसे बनाते।

निरस्त्रीकरण का आह्वान

इसी कारण अपने अंतिम दिनों में आइंस्टीन ने 10 अन्य बहुत प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के साथ मिल कर, 11 अप्रैल 1955 को, रसेल-आइंस्टीन मेनीफेस्टो कहलाने वाले एक आह्वान पर हस्ताक्षर किए। इसमें मानवजाति को निरस्त्रीकरण के प्रति संवेदनशील बनाने का आग्रह किया गया था। दो ही दिन बाद, जब वे इसराइल के स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष्य में एक भाषण लिख रहे थे, उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। 15 अप्रैल को उन्हें प्रिन्सटन के अस्पताल में भर्ती किया गया। 18 अप्रैल को 76 वर्ष की अवस्था में वे दुनिया से चलबसे। शवपरीक्षक डॉक्टर ने आइंस्टीन की आंखों और मस्तिष्क को यह जानने के लिए अंत्येष्टि से पहले ही निकाल लिया कि उनके मस्तिष्क की बनावट में उनकी असाधारण प्रतिभा का कोई रहस्य तो नहीं छिपा है। उनके परिजनों ने मस्तिष्क के साथ इस प्रयोग की अनुमति दे दी थी। पर ऐसी कोई असाधारण संरचना उनके मस्तिष्क में नहीं मिली। मस्तिष्क का एक बड़ा हिस्सा शिकागो के नेशनल म्यूज़ियम ऑफ हेल्थ ऐन्ड मेडिसिन (राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं औषधि संग्राहलय) में आज भी देखा जा सकता है।

यदि आप जानवरों से करते हैं प्यार तो बनें एनिमल ट्रेनर

एनिमल ट्रेनर पुलिस फोर्स, एनिमल शेल्टर, चिड़ियाघर, अस्तबल, एक्वेरियम, प्राणी उद्यान, घुड़सवारी क्लब, हॉर्स फार्म, हॉर्स राइडिंग क्लब आदि में जॉब कर सकते हैं। इसके अलावा, आप पशु चिकित्सा अस्पतालों, प्रयोगशालाओं, पालतू जानवर के स्टोर व रिसर्च फैसिलिटी में भी काम कर सकते हैं। जो लोग एनिमल लवर होते हैं, वह अगर चाहें तो वह ऐसा कार्यक्षेत्र चुन सकते हैं, जिनमें उनका लगभग सारा समय जानवरों के साथ ही बीते। ऐसा ही एक क्षेत्र है एनिमल ट्रेनिंग। एनिमल ट्रेनिंग वास्तव में काफी रोमांचक क्षेत्र है, जिसमें व्यक्ति सिर्फ जानवरों को ही काफी कुछ नहीं सिखाता, बल्कि उनसे भी उन्हें काफी कुछ सीखने को मिलता है। एनिमल ट्रेनिंग में किस तरह बनाएं कॅरियर बता रहें वरूण क्वात्रा...

क्या होता है काम

एक एनिमल ट्रेनर का काम काफी चैलेंजिंग व कठिन होता है, जो विभिन्न तरह की तकनीकों को अपनाकर जानवरों को ट्रेन करते हैं। वे जानवरों को किसी विशेष कमांड व स्थितियों का सामना करने के लिए तैयार करते हैं। साथ ही वह जानवरों को सिक्योरिटी, एंटरटेनमेंट, रेसिंग व दूसरों की मदद के लिए प्रशिक्षित करते हैं। आमतौर पर, एनिमल ट्रेनर कई तरह के ट्रेनर होते हैं, जैसे- पालतू जानवर ट्रेनर, सर्विस एनिमल ट्रेनर, मैरिन मैमेल ट्रेनर, एक्सोटिक एनिमल ट्रेनर, घोड़ा प्रशिक्षक आदि।

योग्यता

एनिमल ट्रेनर बनने के लिए कोई औपचारिक शैक्षिक योग्यता आवश्यक नहीं है, लेकिन व्यक्ति को कम से कम 12वीं पास या कम से कम हाई स्कूल का प्रमाण पत्र होना चाहिए। इसके अलावा समुद्री स्तनधारी ट्रेनर बनने के लिए व्यक्ति को जूलॉजी, जीव विज्ञान, समुद्री जीव विज्ञान, पशु विज्ञान या मनोविज्ञान में स्नातक की डिग्री होनी चाहिए। स्नातक के बाद, आप एनिमल ट्रेनिंग सर्टिफिकेट प्राप्त करके इस क्षेत्र में कदम बढ़ा सकते हैं।

व्यक्तिगल विशेषता

इस क्षेत्र में कॅरियर देख रहे छात्रों को जानवरों से प्यार करना, अपने काम के प्रति जुनून व धैर्य होना बेहद जरूरी है। उन्हें जानवरों को अच्छी तरह हैंडल करना, उन्हें अच्छी तरह पालना व उनका सम्मान करना चाहिए। चूंकि जानवर मुंह से बोलकर अपनी बात नहीं बता सकते, इसलिए एनिमल ट्रेनर के पास अच्छे शिक्षण कौशल होने चाहिए। साथ ही उन्हें जानवरों की गतिविधि व मनोदशा में समझने में सक्षम होना चाहिए। इसी तरह, समुद्री जानवरों के प्रशिक्षण से जुड़े लोगों को तैराकी और डाइविंग तकनीक से परिचित होना चाहिए। इन सब के अलावा उनमें शारीरिक और मानसिक सहनशक्ति अच्छी होनी चाहिए।

प्रमुख संस्थान

- एनिमल रहत, दिल्ली
- कोचीन डॉग ट्रेनिंग एकेडमी व पेट रिसॉर्ट, केरल
- डॉग ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट, मोहाली
- नेशनल ट्रेनिंग सेंटर फॉर डॉग, मध्यप्रदेश
- वुडस्टॉक डॉग ट्रेनिंग स्कूल, चेन्नई

कॅरियर विकल्प

एनिमल ट्रेनर पुलिस फोर्स, एनिमल शेल्टर, चिड़ियाघर, अस्तबल, एक्वेरियम, प्राणी उद्यान, घुड़सवारी क्लब, हॉर्स फार्म, हॉर्स राइडिंग क्लब आदि में जॉब कर सकते हैं। इसके अलावा, आप पशु चिकित्सा अस्पतालों, प्रयोगशालाओं, पालतू जानवर के स्टोर व रिसर्च फैसिलिटी में भी काम कर सकते हैं। वहीं कुछ एनिमल ट्रेनर फीचर फिल्मों या विज्ञापनों के लिए जानवरों के साथ काम करते हैं।

एक एनिमल ट्रेनर का पारिश्रमिक स्थान व पशु के आकार के अनुसार भिन्न होता है। एक डॉग ट्रेनर की तुलना में एक घोड़ा ट्रेनर को बहुत अलग पैमाने पर भुगतान किया जाता है। आप अपने कॅरियर की शुरूआत 10000 रूपए मासिक वेतन से कर सकते हैं। इसके बाद आपके कौशल व अनुभव के आधार पर आपकी आमदनी बढ़ती जाती है। एक अनुभवी व्यक्ति अपने काम के लिए घंटों के अनुसार भी चार्ज कर सकता है।

कुछ वर्ष पूर्व ही देश की राजधानी में हुए बटला हाउस एनकाउंटर और उस एनकाउंटर में शहीद हो गए दिल्ली पुलिस के जाबांज इंस्पेक्टर मोहनचंद्र शर्मा की शहादत को सदियों तक भुलाया नहीं जा सकता सकता। 19 सितंबर 2008 को हुए एनकाउंटर में धाकड़ पुलिस अफसर शर्मा ने आस्तीन के सांपों की गर्दन में अंगूठा डाल दिया था। पर वे लंबे समय तक चली मुठभेड़ में बुरी तरह से घायल हो गए थे। उसी कारण अंततः उनकी मृत्यु भी हुई। उन्हीं इंस्पेक्टर शर्मा की जिस आतंकी आरिज खान की गोली से मौत हुई थी, उसे दिल्ली की एक अदालत ने हत्या का दोषी पाया है। वह खूंखार इंडियन मुजाहिदीन से जुड़ा था। आरिज को धारा 302, 307 और आर्म्स एक्ट में दोषी करार दिया है। आजमगढ़ के रहने आरिज खान उर्फ जुनैद को स्पेशल सेल की टीम ने फरवरी 2018 में गिरफ्तार किया था।

कहां हो छिप गये बटला हाउस मुठभेड़ को फर्जी कहने वालों

19 सितंबर 2008 को हुए एनकाउंटर में धाकड़ पुलिस अफसर शर्मा ने आस्तीन के सांपों की गर्दन में अंगूठा डाल दिया था। पर वे लंबे समय तक चली मुठभेड़ में बुरी तरह से घायल हो गए थे। उसी कारण अंततः उनकी मृत्यु भी हुई।

आर.के.सिन्हा

यह कोई बहुत पुरानी बात नहीं है जब इंस्पेक्टर मोहन चंद्र शर्मा की मौत को लेकर जमकर सियासत हुई थी। उनकी शहादत की जानबूझकर वोटों की राजनीति की खातिर अनदेखी हुई थी। कांग्रेस के नेता दिग्विजय सिंह ने बटला हाउस एनकाउंटर को बेशर्मी से फर्जी बताया था। इतना ही नहीं, वे अपनी बात पर अड़े भी रहे थे। वे यहां तक कह रहे थे कि 'मैं बीजेपी को इसकी न्यायिक जांच की चुनौती देता हूं। मैं अपने बयान पर अडिग हूं।' अब जब अदालत ने आरिज खान को इंस्पेक्टर मोहन चंद्र शर्मा की हत्या के लिए दोषी मान लिया गया है तो संभव है कि वे सब शर्मसार होंगे जो उस बटला हाउस एनकाउंटर को फर्जी बता रहे थे। क्या अब इस पर भी दिग्विजय सिंह कुछ बोलेंगे? क्या उनमें इतनी नैतिकता बची है कि वे इंस्पेक्टर शर्मा के घर जाकर उसके परिवारवालों से माफी मांगेगे अपने उन शर्मनाक बयानों के लिए? बटला हाउस एनकाउंटर को ऑपरेशन बटला हाउस नाम दिया गया था। यह ऑपरेशन इंडियन मुजाहिद्दीन के आतंकियों के खिलाफ चलाया गया था, जिसमें दो आतंकी मारे गए थे और दो को गिरफ्तार किया गया था। बटला हाउस एनकाउंटर को लेकर जिस तरह की ओछी राजनीति हुई उससे इतने ठोस संकेत तो मिल गए थे कि भारत में एक बड़ा सा वर्ग देश के दुश्मनों के हक में बोलने से कतई बाज नहीं आता। बटला हाउस पर दिग्गी राजा से मिलते जुलते बयान ही कई अन्य नेताओं ने भी दिए थे। पश्चिम बंगाल की मौजूदा मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने 17 अक्टूबर 2008 को जामिया नगर में एक जनसभा को संबोधित करते हुए कहा था, "यह (बटला हाउस) एक फर्जी एनकाउंटर था। अगर मैं गलत साबित हुई तो राजनीति छोड़ दूंगी। मैं इस एनकाउंटर पर न्यायिक जांच की मांग करती हूं।" कायदे से तो उन्हें तो अब राजनीति छोड़नी ही चाहिए। उसी सभा में अमर सिंह ने कहा था, 'आडवाणी जी मेरी निंदा इसलिए कर रहे हैं क्योंकि मैंने आपकी मांग का समर्थन किया है और मुझे माफी मांगने को कह रहे हैं। बीबीसी और सीएनएन ने भी इस एनकाउंटर पर सवाल उठाए हैं। मैं आडवाणी जी से मांग करूंगा कि वे न्यायिक जांच की मांग में मदद करें।' लेकिन, तब स्वर्गीय अमर सिंह समाजवादी पार्टी में थे। बात यहीं तक नहीं रूकती कपूर्व केन्द्रीय मंत्री और कांग्रेस के बड़े नेता सलमान खुर्शीद साहब ने 10 फरवरी 2012 को उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ में कांग्रेस की एक रैली को संबोधित करते हुये यह सार्वजनिक दावा किया कि "मैंने जब बटला हाउस एनकाउंटर की तस्वीरें सोनिया गाँधी को दिखाई तब उनकी आँखों से आंसू गिरने लग गये और उन्होंने मुझे प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह जी से बात करने की सलाह दी क" अब आप अंदाजा लगा सकते हैं कि आंसू भरी आँखों से दी गई सलाह क्या हो सकती है ?

आतंकियों के जनाजों में भीड़

इसी भारत में आतंकियों के जनाजों में भीड़ भी उमड़ती है। याद कीजिए मुंबई धमाकों के गुनहगार याकूब मेमन की मुंबई में निकली शव यात्रा को । मुंबई में वर्ष 1993 में हुए सीरियल बम विस्फोट के मामले में दोषी याकूब मेमन को नागपुर केंद्रीय कारागार में फांसी दी गयी। इसके बाद उसकी मुंबई में शव यात्री निकली। उसमें भी हजारों लोग शामिल हुए। जिनके हाथों पर मासूमों का खून लगा हो, क्या समाज के एक वर्ग को उनके साथ खड़ा कभी भी होना चाहिए? इस तरह के ही विक्षिप्त लोग इंस्पेक्टर मोहन चंद्र शर्मा के नेतृत्व में हुए एनकाउंटर पर सवाल खड़े कर रहे थे। हिन्दुओं के खून का प्यासा बुरहान हिजबुल मुजाहिदीन के कमांडर के तौर पर काम करते हुए आतंकवादियों की भर्ती कर रहा था। मेमन की आरिज खान भी देश का दुश्मन था। वह साल 2007 से हरकत में आए इंडियन मुजाहिद्दीन का सक्रिय सदस्य था। इंडियन मुजाहिद्दीन को पाकिस्तान आतंकवादी संगठनों से मदद मिलती रही है। उसके 2007 में उत्तर भारत में हुए कई धमाकों से तार जुड़े हुए थे। इसी संगठन ने 2008 में अहमदाबाद में बड़ा धमाका किया था, जिसमें 50 लोग मारे गए थे। एक बात समझ से परे है कि मुसलमानों का एक वर्ग बिना कुछ समझे बूझे आतंकियों को अपना नायक क्यों मानने लगता है? बुरहान वानी को जेएनयू में देश विरोधी नारे लगाने के आरोपी उमर खालिद ने शहीद साबित करने की कोशिश की थी। उमर खालिद ने अपने फेसबुक पोस्ट पर बुरहान की तुलना लैटिन अमेरिकी क्रांतिकारी चे ग्वेरा तक से कर दी। वही खालिद उमर दिल्ली दंगों का मुख्य मास्टरमाइंड है। फिलहाल वह जेल में है। देखिए एक बात सबको समझ आ जानी चाहिए कि आतंकवाद पर सारे देश को एक साथ मिल कर लड़ना होगा। भारत आतंकवाद की बहुत बड़ी कीमत अदा कर चुका है। इस मसले पर राजनीति तो किसी को नहीं करनी चाहिए। अगर हम आतंकवाद जैसे सवाल पर भी एक नहीं हुए तो फिर मान लें कि हम आतंकवाद से चल रही जंग में कभी भी विजय हासिल नहीं कर सकेंगे।

ऋषभ पंत की कामयाबी के संकेत और संदेश समझिए

देखिए कोई खिलाड़ी अपने चाहने वालों के दिलों पर राज तब करता है जब वह विपरीत हालातों में या खास मैचों में उत्कृष्ट प्रदर्शन करता है। इस तरह के खिलाड़ियों को कहते हैं बिग मैच प्लेयर। डिएगो माराडोना, पेले, लारा, राहुल द्रविड़, सचिन तेंदुलकर बिग मैच प्लेयर रहे हैं। अपने छोटे से करियर में ऋषभ पंत ने इस बात को बार-बार सिद्ध किया है कि वह बिग मैच प्लेयर है। देवभूमि उत्तराखंड के रूड़की शहर के पंत अब देश के सुपरस्टार हैं।

> आपको गुरुग्राम, नोएडा, बैंगलुरू, मोहाली जैसे बड़े आईटी केन्द्रों में हजारों मेरठ, देवास, आजमगढ़ वगैरह के आईटी पेशेवर दिन-रात काम करते हुए मिलेंगे। ये सम्मानजनक सैलरी कमा रहे हैं। अगर यहां पर छोटे शहरों से संबंध रखने वाले बच्चों के अभिभावकों की कुबार्नी की बात नहीं होगी तो बात अधूरी ही रहेगी। बेशक, ये अभिभावक अपने सीमित साधनों और संसाधनों के बावजूद अपने बच्चों को श्रेष्ठ शिक्षा और कोचिंग दिलवाने के लिए हर तरह के कष्ट खुशी-खुशी झेलते हैं। क्या कोई इनके योगदान को नजरअंदाज कर सकता है ?

आर.के. सिन्हा

उसकी सफलता को इस रूप में भी देखना होगा कि अब छोटे शहरों के नौजवान भी अपने आकाश छूने लगे हैं। भारत ने अभी कुछ समय के अंतराल में आस्ट्रेलिया को आस्ट्रेलिया में ही और फिर इंग्लैंड को क्रिकेट टेस्ट सीरिज में हराया। इन दोनों ही सीरिज में पंत का प्रदर्शन शानदार रहा। वे बेखौफ अंदाज से खेलते हैं। उन्हें तेज गेंदबाज या स्पिनर बांध नहीं पाता है। पंत अपनी धमाकेदार बैटिंग से सबको प्रभावित कर चुके हैं। अब पंत को सारी क्रिकेट की दुनिया जानती है। पर मुझे उसकी चमत्कारी प्रतिभा के बारे में तब मालूम चल गया था जब वह अपने गृह नगर रूड़की में ही रहता था। वह तब प्राथमिक स्कूल में था। तब मैंने उसे अपने विद्यालय दि इंडियन पब्लिक स्कूल में प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले एस.पी. सिन्हा टूनार्मेंट में खेलने को बुलाया कमैंने जब उसकी अदभुत क्षमताओं को खेल के मैदान में देखा तब मैंने उसे तुरंत अपने देहरादून स्थित पूर्णतः आवासीय दि इंडियन पब्लिक स्कूल में 100 प्रतिशत स्कालरशिप पर दाखिला दिलवा दिया। वहां उसे कायदे से तराशा गया। अपनी गौशाला के दूध-दही ने उसकी शारीरिक क्षमता का विकास किया कउसे श्रेष्ठ कोचिंग भी मिली। एक क्रिकेट कोच को खासकर उसी के लिये रखा गयाक ऋषभ के पिता एक प्राइमरी स्कूल टीचर थे कउन्हें तो विश्वास ही नहीं हुआ कि देहरादून के एक बड़े आवासीय विद्यालय में उनके बच्चे का एडमिशन 100 प्रतिशत स्कालरशिप पर हो गया है। खब्बू पंत और महेन्द्र सिंह धोनी में कई समानताएं नजर आती हैं। दोनों मूल रूप से देवभूमि उत्तराखंड से हैं। हालांकि धोनी का परिवार रांची में बसा हुआ है। दोनों स्टारडम मिलने के बाद भी विनम्र है। धोनी और पंत अब भी अपने बड़ों का आदर करते हुए चरण स्पर्श करते हैं। यह कोई छोटी बात नहीं है। भारत की क्रिकेट लगभग दस वर्षों तक धोनी के इर्द-गिर्द घूमी। वे हरेक आड़े वक्त में चट्टान की तरह से विकेट पर खड़े हो जाते थे। पंत आस्ट्रेलिया से लेकर अहमदाबाद में विकेट पर किसी योद्धा कि तरह से डटे रहे। उन्होंने दोनों सीरिज में भारत की विजय को सुनिश्चित किया। हालांकि उन्हें क्रिकेट का ज्ञान देने वालों की कोई कमी नहीं है, पर वे खेलते रहे अपने मन से। वे गैर-जिम्मेदार नहीं है। पर ताबड़तोड़ खेलना उनका स्टाइल है। वे भविष्य के टीम इंडिया के कप्तान हैं। उन्हें अभी कम से कम 12-14 साल और खेलना है।

गुण नेतृत्व के

पंत चाहें तो धोनी से बहुत कुछ सीख सकते हैं। खासतौर पर नेतृत्व के गुण। धोनी विजय और पराजय में किसी साधु की तरह निर्विकार भाव से रहते थे। इसलिए ही धोनी बाकी से अलग माने गए। भारतीय क्रिकेट प्रेमियों ने कोई अच्छे कर्म किए थे कि उन्हें इतना बेहतरीन कप्तान और बल्लेबाज मिला था। पंत और धोनी का सफलता की नई-नई इबारतें लिखना सिद्ध करता है कि अब देश के छोटे शहर भी किसी से कम नहीं हैं। गुजरे कुछ सालों से देखने में आ रहा है कि देश के महानगरों या बड़े शहरों से हटकर छोटे शहरों के युवा भी शिखर को छू रहे हैं। पिछले साल हरियाणा के प्रदीप सिंह ने यूपीएससी की परीक्षा में देशभर में टॉप किया था। सोनीपत जिले के प्रदीप सिंह किसान परिवार से हैं। पिता खेती करते हैं। प्रदीप सिंह ने 2016 में यूपीएससी के लिए पेपर दिया था, लेकिन सफल नहीं हुए। 2017 में भी निराशा हाथ लगी। फिर उन्होंने इनकम टैक्स इंस्पेक्टर की नौकरी कर ली। 2018 में उन्होंने यूपीएससी की परीक्षा क्लियर कर ली। उन्हें कस्टम एंड एक्साइज डिपार्टमेंट में तैनाती मिली। वे तब ट्रेनिंग पर थे। रैंक में सुधार करने के लिए 2019 में फिर से परीक्षा दी थी। हरियाणा के कुरुक्षेत्र जिले में एक जगह है शाहबाद मारकंडा। भारतीय महिला हॉकी टीम की कप्तान रानी रामपाल शाहबाद मारकंडा से ही है। रानी रामपाल भी बेहद साधारण परिवार से हैं। वह रेलवे में नौकरी करती है। उसके पिता मजदूरी करके घर चलाते हैं।

किसकी बपौती बड़ी सफलता

मतलब यह है कि अब बड़ी सफलता बड़े शहरों की बपौती नहीं रही। बड़े शहरों में बड़े स्टेडियम और दूसरी आधुनिक सुविधाएं होगी। पर जज्बा तो छोटे शहर वालों में भी कम नहीं है। ये अवरोधों को पार करके सफल हो रहे हैं। इनमें अर्जुन दृष्टि है। ये जो भी करते हैं, उसमें फिर पूरी ताकत झोंक देते हैं। ये सोशल मीडिया पर बिजी नहीं रहते। यह बहुत पुरानी बातें नहीं हैं जब दिल्ली, मुंबई, बैंगलुरू और कुछ दूसरे बड़े शहरों के चंदेक एलिट स्कूलों तथा कॉलेजों के ही स्टुडेंट्स यूपीएससी तथा दूसरी खास परीक्षाओं में टॉप करते थे। इन्हीं के बच्चे एक्टर, खिलाड़ी वगैरह बनते थे। नए भारत में सफलता का स्वाद सभी राज्यों के छोटे शहरों के बच्चों को लग गया है। दरअसल अब एक तालमेल बैठ रहा है। सफलता छोटेझबड़े शहरों और महानगरों के नौजवानों को मिल रही हैं। पहले यह स्थिति नहीं थी। यह बात आप भी मानेंगे। देखिए कोई देश की लाख बुराई कर ले पर उसे भी इतना तो मानना होगा कि अब दूर-दराज के इलाकों में भी सड़कें बन गई हैं। अब बिजली की कटौती से किसी का जीवन नरक नहीं हो रहा है। इंटरनेट से दुनिया एक मुट्ठी में आ गई है। सूचनाओं और ज्ञान की सुनामी आ चुकी है। दरभंगा, बरेली, ग्वालियर का नौजवान भी विश्वास से लबरेज है। वह कायदे से अपनी बात रखता है। आप उसे खारिज नहीं कर सकते है। वह अपने लिए खुद की सही जगह बना रहा है। आपको गुरुग्राम, नोएडा, बैंगलुरू, मोहाली जैसे बड़े आईटी केन्द्रों में हजारों मेरठ, देवास, आजमगढ़ वगैरह के आईटी पेशेवर दिन-रात काम करते हुए मिलेंगे। ये सम्मानजनक सैलरी कमा रहे हैं। अगर यहां पर छोटे शहरों से संबंध रखने वाले बच्चों के अभिभावकों की कुबार्नी की बात नहीं होगी तो बात अधूरी ही रहेगी। बेशक, ये अभिभावक अपने सीमित साधनों और संसाधनों के बावजूद अपने बच्चों को श्रेष्ठ शिक्षा और कोचिंग दिलवाने के लिए हर तरह के कष्ट खुशी-खुशी झेलते हैं। क्या कोई इनके योगदान को नजरअंदाज कर सकता है ?

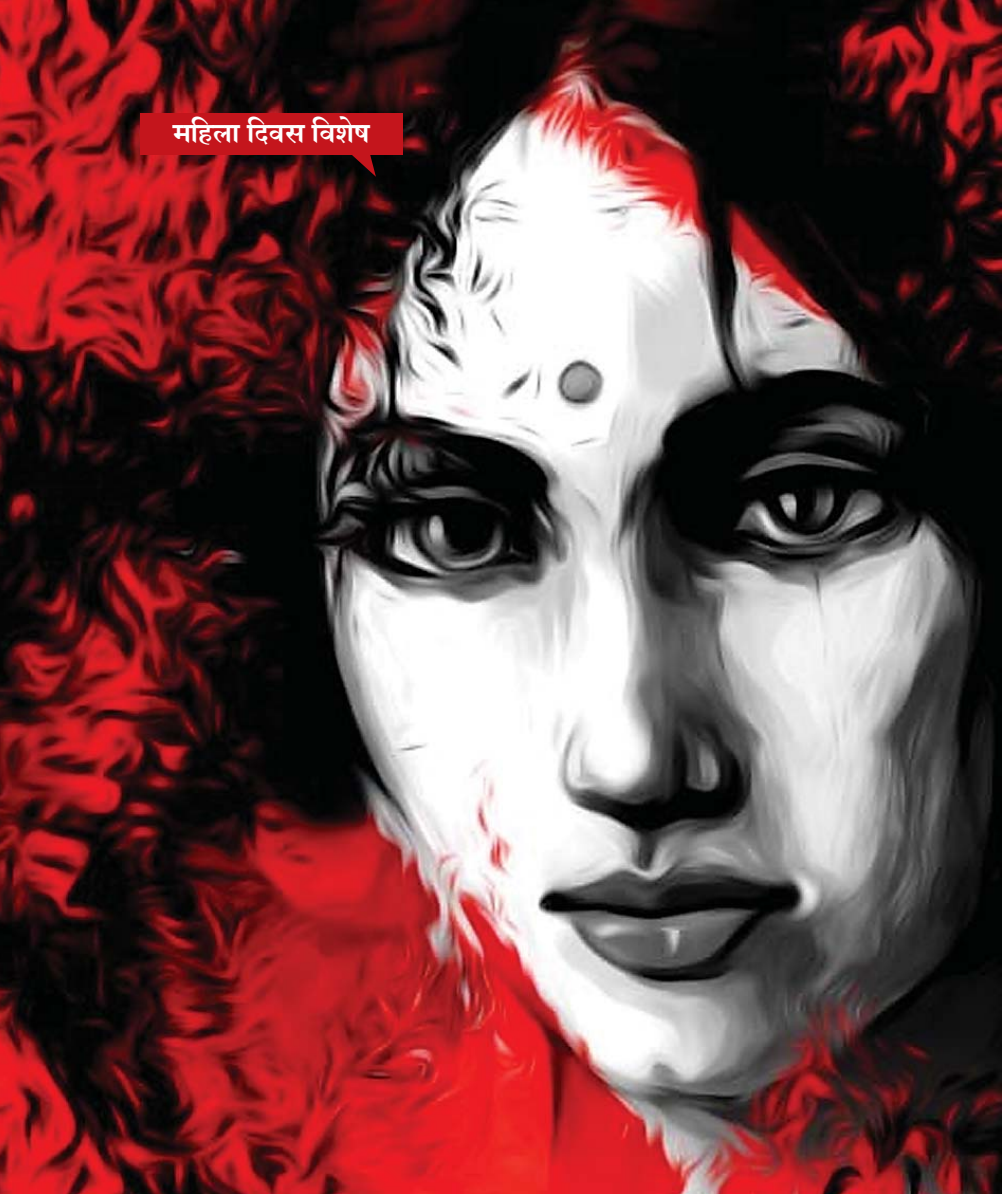

महिला दिवस विशेष

स्मृति आदित्य

कब-कब, कहां-कहां, कैसे-कैसे छली और तली गई स्त्रियां। मन, कर्म और वचन से प्रताड़ित नारियां। मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक-असामाजिक कुरीतियों, विकृतियों की शिकार महिलाएं। सामाजिक ढांचे में छटपटातीं, कसमसातीं औरत, जिन्हें कोई देखना या सुनना पसंद नहीं करता। क्यों हम जागें किसी एक दिन। क्यों न जागें हर दिन, हर पल अपने आपके लिए। महिला दिवस किसी 'श्राद्ध' की तरह लगता है जब हमारे ही देश में कोई आयशा हंसते हुए साबरमती में समा जाती है, कोई निर्भया अपनी मौत के सालों बाद इंसाफ पाती है...जब नन्ही-कोमल बच्चियां निम्न स्तरीय तरीके से छेड़छाड़ की शिकार होती हैं। जब हम छोटे-छोटे बच्चे-बच्चियों को गुड टच-बेड टच सिखाते हैं तो शर्म से पानी पानी हो जाते हैं.. कि क्यों हमारा बचपन भी सुरक्षित नहीं... कितना गिर गए हैं हम और अभी कितना गिरने वाले हैं। रसातल में भी जगह बचेगी या नहीं? एक अजीब-सा तर्क भी उछलता है कि महिलाएं स्वयं को परोसती हैं तब पुरुष उसे छलता है। या तब पुरुष गिरता है। सवाल यह है कि पुरुष का चरित्र इस समाज में इतना दुर्बल क्यों है? उसके अपने आदर्श, संस्कार, मूल्य, नैतिकता, गरिमा और दृढ़ता किस जेब में रखे सड़ रहे होते हैं? सारी की सारी मयार्दाएं देश की 'सीताओं' के जिम्मे क्यों आती हैं जबकि 'राम' के नाम पर लड़ने वाले पुरुषों में मयार्दा पुरुषोत्तम की छबि क्यों नहीं दिखाई देती? पुरुष चाहे असंख्य अवगुणों की खान हो स्त्री को अपेक्षित गुणों के साथ ही प्रस्तुत होना होगा।

महिला दिवस साधारण स्त्रियों की असाधारण गाथाओं के नाम

महिला दिवस हम सभी का अस्मिता दिवस है। गरिमा दिवस या जागरण दिवस कह लीजिए। उन जुझारू और जीवट महिलाओं की स्मृति में मनाया जाने वाला जो काम के घंटे कम किए जाने के लिए संघर्ष करती हुई शहीद हो गई। इतिहास में महिलाओं द्वारा प्रखरता से दर्ज किया गया वह पहला संगठित विरोध था। फलत: 8 मार्च नियत हुआ महिलाओं की उस अदम्य इच्छाशक्ति और दृढ़ता को सम्मानित करने के लिए। जब हम 'फेमिनिस्ट' होते हैं तब जोश और संकल्पों से लैस हो दुनिया को बदलने निकल पड़ते हैं। तब हमें नहीं दिखाई देती अपने ही आसपास की सिसकतीं, सुबकतीं स्वयं को संभालतीं खामोश स्त्रियां। न जाने कितनी शोषित, पीड़ित और व्यथित नारियां हैं, जो मन की अथाह गहराइयों में दर्द के समुद्री शैवाल छुपाए हैं।

यह दोहरा दबाव क्यों और कब तक? एक सहज, स्वतंत्र, शांत और सौम्य जीवन की हकदार वह कब होगी? स्त्री इस शरीर से परे भी कुछ है, यह प्रमाणित करने की जरूरत क्यों पड़ती है? वह पृथक है, मगर इंसान भी तो है। उसकी इस पृथकता में ही उसकी विशिष्टता है। वह एक साथी, सहचर, सखी, सहगामी हो सकती है लेकिन क्या जरूरी है कि वह समाज के तयशुदा मापदंडों पर भी खरी उतरे? हर जगह आंकड़े दिल दहलाने वाले हैं, वहीं आंकड़ों के पीछे का सच रुला देने वाला है। बशर्ते हममें संवेदनशीलता का अहसास बूंदभर भी बचा हो। 'घरेलू हिंसा कानून' जैसे कानून बनते रहे, मगर सच यह है कि हममें कानून तोड़ने की क्षमता अमलीकरण से ज्यादा है। बहुत मन होता है कि दिवस के बहाने कुछ सकारात्मक सोचें, मगर जब चारों ओर दहेज, बलात्कार, अपहरण, हत्या, आत्महत्या, छेड़छाड़ प्रताड़ना, शोषण, अत्याचार, मारपीट, भ्रूण हत्या और अपमान के आंकड़े बढ़ रहे हों तो महिला प्रगति किन आंखों से देखें?

महिलाओं के प्रेरणादायी चरित्र गिनाए जा सकते हैं, मगर कैसे भूल जाएं हम उस भारतीय स्त्री को जो गांवों और मध्यमवर्गीय परिवारों की रौनक है, लेकिन रोने को मजबूर है। महिला दिवस पर चमचम साड़ी में सिर्फ 'महिला' होने का अवॉर्ड हाथ में लेती, महानगरों में रंगीन वस्त्रों में थिरकती-झूमती, क्लबों में खेलती-इठलाती महिलाएं तो कतई स्वतंत्र नहीं कही जा सकतीं। जिनकी अपनी कोई सोच या दृष्टिकोण नहीं होता सिवाय इसके कि 'मैच' के 'बूंदें' और सैंडिल कहां से मिल सकेंगे। बजाय इसके स्वतंत्र और सक्षम मान सकते हैं उस महिला को जो मीलों कीचड़ भरा रास्ता तय करके ग्रामीण अंचलों में पढ़ने या प्रशिक्षण देने के लिए पहुंचती है। हम नमन कर सकते हैं उस महिला जिजीविषा को जो कचरा बिनते हुए पढ़ने का ख्वाब बुनती है और एक दिन अपना कंप्यूटर सेंटर संचालित करती है। मसाला, पापड़, वाशिंग पावडर जैसी छोटी-छोटी चीजें बनाती हैं और कर्मशीलता का अनूठा उदाहरण पेश करती हैं। मेरे लिए सक्षम है भोपाल की हीरा बुआ जो कोरोना काल में लावारिस लाशों को अंतिम संस्कार का सम्मान दे रही है...

हम महिला दिवस मना रहे हैं उन साधारण महिलाओं की 'साधारण' उपलब्धियों के लिए जो 'असाधारण' हैं। महिला दिवस मनाया जाए उन तमाम मजदूर, कामगार और कामकाजी महिलाओं के नाम, जो सीमित दायरों में संघर्ष और साहस के उदाहरण रच रही हैं। एकदम सामान्य, नितांत साधारण मगर सचमुच असाधारण, अद्वितीय। वे महिलाएं जो तमाम विषमताओं के बीच भी टूटती नहीं हैं, रुकती नहीं हैं... झुकती नहीं हैं। अपने-अपने मोर्चों पर डटी रहती हैं बिना थके। सम्माननीय है वह भारतीय नारी जो दुर्बलता की नहीं प्रखरता की प्रतीक है। जो दमित है, प्रताड़ित है उन्हें दया या कृपा की जरूरत नहीं है, बल्कि झिंझोड़ने और झकझोरने की आवश्यकता है। वे उठ खड़ी हों। चल पड़ें विजय अभियान पर। विजय इस समाज की कुरीतियों पर, बंधनों पर और अवरोधों पर। शुभकामनाएं साल के पूरे 365 दिवस की। इसी क्षण की।

आखिर 8 मार्च को ही क्यों मनाया जाता है अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस?

अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस 2021: 8 मार्च यानी आज दुनियाभर में लोग अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मना रहे हैं। अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस को मनाने के पीछे का लक्ष्य है समाज में महिलाओं को बराबरी का अधिकार देना और समाज में उनकी भागीदारी को बढ़ावा देना। हर देश में इस दिन को अलग-अलग तरीकों से मनाया जाता है। इस दिन महिलाओं के आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक उपलब्धियों को याद किया जाता है। ज्यादातर लोग इस दिन महिलाओं को फूल और गिफ्ट्स देते हैं। कई देशों में इस दिन अवकाश होता है, स्कूल, कॉलेज, दफ्तरों में महिलाओं को आज के दिन छुट्टी दी जाती है। लेकिन बहुत कम ही लोग ऐसे हैं, जो अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस से जुड़े इतिहास के बारे में जानते हैं, कि आखिर अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस की शुरूआत कैसे हुई, ये 8 मार्च को ही क्यों मनाया जाता है, इत्यादी। तो आइए अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस से जुड़ी इन सारी बातों को जानते हैं।

कब और कैसे शुरू हुआ महिला दिवस मनाना?

अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस की शुरूआत एक विरोध आंदोलन से हुई है। साल 1908 में 28 फरवरी को तकरीबन 15 हजार महिलाओं ने अमेरिका के न्यूयॉर्क शहर में मार्च निकालकर नौकरी में कम घंटों, पुरुष के समान सैलरी और वोट करने के अधिकार के लिए विरोध प्रदर्शन किया था। ठीक इसके एक साल बाद 1908 में सोशलिस्ट पार्टी ऑफ अमेरिका ने 28 फरवरी के इस दिन को पहला राष्ट्रीय महिला दिवस घोषित कर दिया। इसके बाद यह फरवरी के आखिरी रविवार के दिन मनाया जाने लगा।

महिला दिवस अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मनाए जाने की शुरूआत कैसे हुई?

महिला दिवस को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मनाए जाने के बारे में क्लारा जेटकिन ने सबसे पहले सोचा था। क्लारा जेटकिन ने 1910 में कोपेनहेगन में कामकाजी महिलाओं की एक इंटरनेशनल कॉन्फ्रेंस में अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाने का पहली बार सुझाव दिया था। उस वक्त प्रेस कॉन्फ्रेंस में दुनियाभर के 17 देशों की 100 महिलाएं शामिल थीं। सभी ने इस सुझाव का समर्थन किया और 1910 में ही सोशलिस्ट इंटरनेशनल के कोपेनहेगन सम्मेलन में महिला दिवस को अंतरराष्ट्रीय दर्जा दिया गया। उस समय इसका प्रमुख उद्देश्य महिलाओं को वोट देने का अधिकार दिलवाना था, क्योंकि उस समय अधिकतर देशों में महिला को वोट देने का अधिकार नहीं था। सबसे पहले 1911 में स्विट्जरलैंड, ऑस्ट्रिया, डेनमार्क और जर्मनी में अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाया गया था। 1917 में सोवियत संघ ने इस दिन को एक राष्ट्रीय अवकाश घोषित किया था। और यह आसपास के अन्य देशों में भी ये फैल गया। जिसके बाद अब कई पूर्वी देशों में भी ये मनाया जाता है।

आखिर 8 मार्च को ही क्यों मनाया जाता है अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस?

अब सवाल उठता है कि आखिर फरवरी के आखिरी रविवार से 8 मार्च का दिन अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के लिए क्यों चुना गया और कैसे चुना गया? असल में अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस का कॉन्सेप्ट लाने वाली क्लारा जेटकिन ने महिला दिवस मनाने के लिए किसी तारीख को निर्धारित नहीं किया था। 1917 में युद्ध के दौरान रूस की महिलाओं ने 'ब्रेड एंड पीस' यानी रोटी और कपड़े के लिए हड़ताल पर जाने का फैसला किया था। यह हड़ताल भी ऐतिहासिक थी क्योंकि महिलाओं की हड़ताल ने वहां के सम्राट निकोलस को अपना पद छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया था। उसके बाद अन्तरिम सरकार ने महिलाओं को वोट देने के अधिकार दिया। उस समय रूस में जूलियन कैलेंडर चलता था और बाकी दुनिया में ग्रेगेरियन कैलेंडर चलता था। जिस दिन महिलाओं ने यह हड़ताल शुरू की थी वो तारीख 23 फरवरी थी। (रूस के जूलियन कैलेंडर के अनुसार) ग्रेगेरियन कैलेंडर में यह दिन 8 मार्च था। उस वक्त पूरी दुनिया में ग्रेगेरियन कैलैंडर चलता है। इसलिए उसी के बाद से अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस 8 मार्च को मनाया जाने लगा।

1975 में संयुक्त राष्ट्र ने दी अधिकारिक मान्यता

संयुक्त राष्ट्र ने 1975 में महिला दिवस को आधिकारिक मान्यता दी। संयुक्त राष्ट्र ने महिला दिवस को वार्षिक तौर पर एक थीम के साथ मनाना 1975 में शुरू किया। अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस की पहली थीम थी 'सेलीब्रेटिंग द पास्ट,प्लानिंग फॉर द फ्यूचर।' यानी बीते हुए वक्त का जश्न मनाए और आने वाले कल की प्लानिंग करें। साल 2021 के अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस की थीम है, चूज टू चैलेंज।

शिवरात्रि पर 'रुद्राभिषेक' और 'रुद्री पाठ' का महत्त्व

विंध्यवासिनी सिंह

महाशिवरात्रि भगवान भोले भंडारी का बहुत महत्वपूर्ण पर्व है। कहते हैं, इस दिन जो भगवान शंकर की आराधना और मन से पूजन अर्चन करता है, उसके तमाम संकट दूर हो जाते हैं। यूं भी चाहे कोई व्यक्ति अच्छा हो, या कोई व्यक्ति बुरा हो, सभी का दुख हरने वाले को ही महाकाल कहते हैं। महाशिवरात्रि आने वाली है और शास्त्रों के जानकार बताते हैं कि इस दिन महारुद्राभिषेक करने से विशेष पुण्य की प्राप्ति होती है। महारुद्राभिषेक करने से सुख संपत्ति के साथ शत्रुओं का साया भी समाप्त हो जाता है, तो वहीं समाज में प्रतिष्ठा भी मिलती है। इतना ही नहीं, धर्म के जानकार कहते हैं कि महारुद्राभिषेक कराने से दुखों का अंत होता है, और मां लक्ष्मी की भी कृपा बनी रहती है। आइए जानते हैं, तमाम विपदाओं को दूर करने, और संपन्नता से आपको परिपूर्ण करने में उपयोगी महारुद्राभिषेक यज्ञ किस प्रकार किया जाता है।

शिव भक्तों के लिए शिवरात्रि के दिन की पूजा अर्चना बहुत महत्वपूर्ण होती है। वहीं महारुद्राभिषेक के लिए आपको निम्न वस्तुओं की जरूरत पड़ती है।

1. इनमें घर का वातावरण सुखद और पवित्र रखने के लिए दूध
2. अचानक नुकसान या परिवारिक कलर से बचने के लिए दही
3. ज्ञान प्राप्त करने के लिए शहद
4. खुशहाली के लिए शक्कर की आवश्यकता पड़ती है
5. साथ ही नारियल पानी जो शत्रुओं का प्रभाव और प्रेतों को दूर करता है।
6. इसके अलावा भस्म भी इसी काम में लाया जाता है।
7. वर्षा का जल जो नेगेटिव पॉवर को आप से दूर रखता है।
8. गन्ने का रस जो माता लक्ष्मी को प्रसन्न करने के काम में आता है।
9. गंगाजल जो तमाम ग्रहों द्वारा उत्पन्न दोष निवारण करता है।
10. सुखद स्वास्थ्य के लिए भांग और
11. कारोबार में अड़चनों के लिए घी का प्रयोग किया जाता है।

किस दिन कराएं 'रुद्राभिषेक'?

किसी भी तीथि को रुद्राभिषेक नहीं होता है, बल्कि इसके लिए विशेष तिथियां होती हैं। कृष्णपक्ष की प्रतिपदा, चतुर्थी, पंचमी, अष्टमी, एकादशी, द्वादशी, अमावस्या इसके लिए निश्चित की गयी हैं, तो शुक्लपक्ष की द्वितीया, पंचमी, षष्ठी, नवमी, द्वादशी, त्रयोदशी तिथियों में ही रुद्राभिषेक किया जाता है।

शिवरात्रि पर क्या लगाएं 'भोग'?

शिवरात्रि पर भगवान शिव को प्रसन्न करना है, तो बेर, बेलपत्र, धतूरा और पंचामृत का भोग लगाएं। वहीं आप चाहे तो महाशिवरात्रि पर भोलेनाथ को मखाने की खीर का भोग भी लगा सकते हैं। महाशिवरात्रि की अहमियत हमेशा ही विशिष्ट रहती है, क्योंकि इस दिन भगवान शिव और माता पार्वती का विवाह हुआ था। आप कह सकते हैं कि इस दिन शिव और शक्ति का मिलन हुआ था। जैसा कि सभी जानते हैं कि तमाम देवताओं में शिवजी ही एकमात्र ऐसे देवता हैं, जो बेहद आसानी से प्रसन्न हो जाते हैं, और अपने भक्तों को मनोवांछित आशीर्वाद देते हैं। शास्त्रों में वर्णित तमाम ऐसी कथाएं हैं, जब भगवान अपने भक्तों की भक्ति से प्रसन्न होकर उन्हें ऐसे ऐसे आशीर्वाद दे बैठते हैं जो किसी और देवता द्वारा नहीं दिए जा सकते! इसीलिए उन्हें औघड़ दानी भी कहा जाता है। तो इस शिवरात्रि को आप भगवान शंकर को प्रसन्न करने के लिए महा रुद्राभिषेक का यज्ञ अवश्य करें।

शिवरात्रि पर 'रुद्री पाठ'

रुद्राभिषेक के अलावा अगर शिवरात्रि के दिन 'रुद्री पाठ' का आयोजन किया जाता है तो इसका विशेष फल मिलता है। लेकिन ध्यान देने वाली बात यह है कि 'रुद्री पाठ' की पूजा प्रकांड पंडित द्वारा ही कराया जाये। क्योंकि इसके गलत मंत्रोच्चारण से इसका उल्टा असर पड़ता है और यह विनाशकारी होता है।

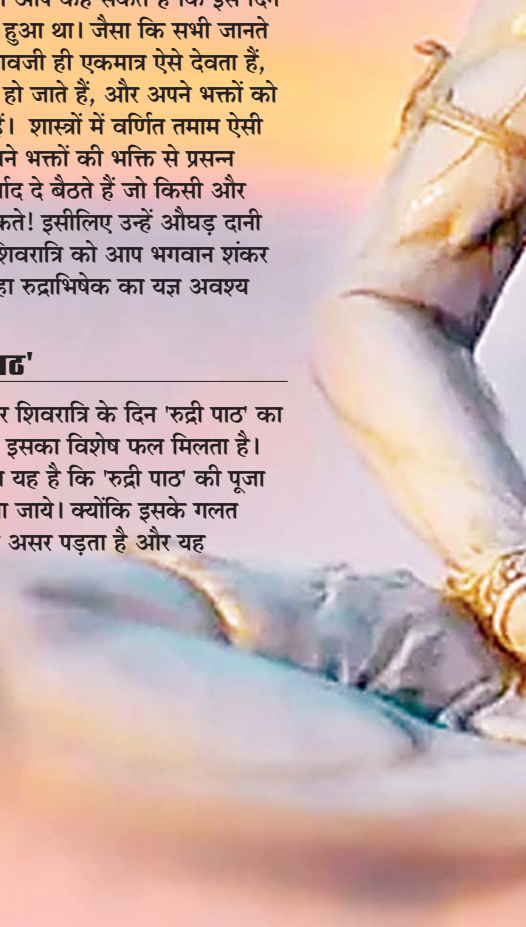

'रुद्री पाठ'

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं विभुं व्यापकं
ब्रह्मवेदस्वरूपम'
निजं निगुर्णं निर्विकल्पं निरीहं
चिदाकाशमाकाशवासं भजेअहम

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं गिरा घ्यान
गोतीतमीशं गिरीशम'
करालं महाकाल कालं कृपालं गुणागार
संसारपारं नतोअहम

तुश्हाराद्रि संकाश गौरं गभीरं मनोभूत
कोटिप्रभा श्री शरीरम'
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गङ्गा
लसद्भालबालेन्दु कण्ठे भुजङ्गा''

चलत्कुण्डलं भ्रू सुनेत्रं विशालं प्रसन्नाननं
नीलकण्ठं दयालम'
मृगाधीशचर्माम्बरं मुण्डमालं प्रियं शंकरं
सर्वनाथं भजामि''

प्रचण्डं प्रकृश्ष्टं प्रगल्भं परेशं अखण्डं अजं
भानुकोटिप्रकाशम'

त्रयः शूल निर्मूलनं शूलपाणिं भजे.अहं
भवानीपतिं भावगम्यम''

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी सदा
सज्जनानन्ददाता पुरारी'
चिदानन्द संदोह मोहापहारी प्रसीद प्रसीद
प्रभो मन्मथारी''

न यावत.ह उमानाथ पादारविन्दं भजन्तीह
लोके परे वा नराणाम'
न तावत.ह सुखं शान्ति सन्तापनाशं प्रसीद
प्रभो सर्वभूताधिवासम''

न जानामि योगं जपं नैव पूजां नतो.अहं सदा
सर्वदा शम्भु तुभ्यम'
जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं प्रभो पाहि
आपन्नमामीश शम्भो''

रुद्राश्ष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोश्हये '
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेश्हां शम्भुः
प्रसीदति''

इति श्री गोस्वामी तुलसिदास कृतम
श्रीरुद्राश्ष्टकम संपूर्णम लल

पानी पीना है सेहत के लिए वरदान?

1 पहली बात तो यह, कि पानी पीने का एक सबसे अच्छा फायदा आप सभी जानते ही होंगे कि सिर्फ पानी पीने से आप न केवल अपना वजन तेजी से घटा सकते हैं, लेकि?न आप यह नहीं जानते कि सिर्फ 9 दिनों में आप यह कमाल कर सकते हैं। आप इतना वजन घटा सकते हैं, जितनी कैलोरी रोजाना 8 किमी की जॉगिंग के बाद कम होती है।

2 आपका मेटाबॉलिज्म तेज होगा और ऊर्जा का स्तर भी आश्चर्यजनक रूप से बढ़ेगा जिससे आप चुस्त फुतीर्ले रह सकेंगे। खास तौर से सुबह के वक्त पानी की अच्छी मात्रा आपके मेटाबॉलिज्म को बढ़ाती है।

3 आपका दिमाग बेहतर तरीके से काम करेगा और आप मस्तिष्क की ऊर्जा और क्षमताओं को बढ़ता हुआ महसूस करेंगे। क्योंकि मस्तिष्क का 75 से 85 प्रतिशत भाग में पानी होता है। अतः आप अधिक से अधिक पानी पीकर उसे शक्ति प्रदान करते हैं और अपनी एकाग्रता को बढ़ाते हैं।

4 आप कम खाते हैं, अर्थात ओवर ईटिंग से बच जाते हैं और पानी के कारण पेट भरा हुआ लगता है, जो आपको ज्यादा न खाने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार आप अपना वजन भी आसानी से कम कर सकते हैं।

5 जब शरीर में पानी का स्तर बेहतर होता है, तो तरलता के कारण आपका शरीर हानिकारक, विषैले तत्वों को आसानी से शरीर से बाहर कर पाता है और आपकी उम्र और स्वास्थ्य पर इसका असर नजर आता है।

6 पानी पीते रहना, कई प्रकार की बीमारियों से बचाए रखने का एक बढ़िया उपाय है। खास तौर से हाइपरटेंशन, किडनी संबंधी समस्याएं, मूत्राशय की बीमारियां और आंतों का कैंसर आदि की संभावना नहीं होती।

7 आपका हृदय बेहतर तरीके से काम करता है, अगर आपके शरीर में पानी की मात्रा अधिक या सही स्तर पर होती है। दिनभर में कम से कम 5 ग्लास पानी हार्ट अटैक की संभावना को 41 प्रतिशत तक कम करता है।

8 आपकी त्वचा की खूबसूरती में तो पानी पीने की यह आदत चार चांद लगा सकती है। आपकी त्वचा नर्म, मुलायम, साफ, बेदाग और तेल रहित बनी रहेगी।

9 और हां, आपके पैसे बचेंगे सो अलग। क्योंकि आप जिन पसंदीदा पेय पदार्थों को पीने के लिए पैसे खर्च करते हैं, उसकी जगह पानी आपको आसानी से और सस्ते में और कई बार निशुल्क उपलब्ध हो जाता है।

हमारे विकास की अंधी दौड़ से सृष्टि का विनाश क्यों ?

प्रकृती ने मनुष्य को समस्त बुनियादी आवश्यकताओं, सुख और सम्पदा के सारे संसाधन प्रदान किए हैं। प्रकृती ने शुद्ध वायु दी जिसमे हम सांस लेते हैं, शुद्ध पानी दिया जिसे हम पीते हैं एवम मिट्टी जिसमें हम अन्न पैदा करते हैं । इनके आभाव में पृथ्वी पर जीवन असंभव है, तमाम विकास के बाबजूद हम इन बुनियादी आवश्यकताओं के निर्माण में अक्षम हैं। जब जब हम प्रकृती से अनावश्यक खिलवाड़ करते हैं तब तब उसका गुस्सा भूकम्प, सुनामी, बाढ़, सुखा एवम तूफान की शक्ल में हमारे सामने आया है। क्या विकास की आंनधी दौड़ से प्रकृती विनाश की ओर बढ़ रही है। भूस्खलन, बादल फटना, ग्लेशियर का टूटना, भूकंप एवम चक्रवात जैसी 1960 दशक के बाद से चरम मौसम और जलवायु संबंधी घटनाओं की वजह इन आपदाओं की संख्या बढ़ रही हैं, जो प्रमुख प्राकृतिक आपदाएं आ रही है, इनमें अधिक से अधिक को मौसम और जलवायु से किसी न किसी तरह जोड़ कर देखा जा सकता है। उतराखण्ड के चमोली जिले में 7 फरवरी को ग्लेशियर टूटने से आई आपदा ने देश ही नहीं बल्कि विश्व को भी एक बार फिर से कड़ा संदेश दिया है।

देवेश चतुर्वेदी

एक्सपर्ट्स का मानना है कि पिछले 10 दशकोंसे पृथ्वी पर ग्लेशियर बहुत तीव्र गति से पिघल रहे हैं, जिसका प्रमुख कारण है "ग्लोबल वार्मिंग"। एक्सपर्ट्स का यह भी मानना है कि इस शताब्दी के अन्त तक इस रफ्तार से तो हिमालय का एक तिहाई भाग ग्लेशियर खो देगा। वैज्ञानिकों के अनुसार अगर धरती का तापमान 2 डिग्री सेल्सियस से अगर बढता रहा तो पृथ्वी की जलवायु में बड़ा परिवर्तन हो सकता है, जिसके असर से समुद्र तल की उचाई बढ़ना, बाढ़ आना, जमीन का धंसना, अकाल पड़ना और जंगलों में आग जैसी आपदाएं बढ़ जायेगी। वैज्ञानिक इसके लिए ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन कोजिम्मेदार मानते हैं। सभी हिल स्टेशन अब कंकरीट के जंगल में तब्दील हो जा रहे हैं। हर हिल स्टेशन टूरिस्ट के आवागमन से क्षुब्ध है। प्रतिदिन कम से कम 3-4 हजार टूरिस्ट वाहनों के आवागमन से परेशान है। हिल स्टेशन पर इतना बड़ा परिवर्तन हो रहा है। आज पहाड़ों ओर वृक्षों को काट के रास्तों को चौड़ा किया जा रहा है। बड़े-बड़े रिसॉर्ट्स और होटल का निर्माण, अनियंत्रित विकास, ऑटोमोबाइल प्रदूषण, नंन-डिग्रेडेबल कचरा हमारी प्रकृती की सांसें घोंट रहा है। प्रकृतीक संसाधनों का व्यापक अंधाधुन उपयोग हो रहा है। पहाड़ जलवायु परिवर्तन के लिए सबसे संवेदनशील परिस्थिति के तंत्र में से हैं, किसी भी निवास की तुलना में तेजी से प्रभावित होते हैं। हम नदियों को अपने फायदे के हिसाब से मोड़ने का सोच रहे हैं, बांध बना रहे हैं। बांध का पानी अक्षय ऊर्जा प्रदान करता है ओर बाढ़ को रोकता भी है परन्तु दुर्भाग्य से बांध जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को भी खराब करते हैं। यह ग्रीन हाउस गैसों को छोडते हैं। आदेभुमि ओर महासागर के कार्बन सींक को नष्ट करते हैं। आवासों को नष्ट करते हैं, समुद्र के स्तर को बढ़ाते हैं, पानी को बरबाद करते हैं। आज विश्व के तमाम देश चाहे कितने भी विकसित हो या विकासशील हों परन्तु विगत वर्षों में आईं आपदाओ से हमें समझना चाहिए कि प्रकृती कितनी बड़ी है ओर हमारे काबू से बाहर है, हम उससे छेड़ छाड नहीं कर सकते। प्रकृती जब आपना रौद्र रूप दिखाती है मानव अपने आप को कितना असहाय महसूस करता है। जब विश्व भर में विकास की प्रक्रिया का प्रारम्भ हुआ होगा तब शायद ही हमें जरा भी अन्दाजा होगा कि इस अनियन्त्रित, असंतुलित एवम अनियमित विकास से हम विनाश का माग? बना रहे हैं। आज हम विकास की चरम अवस्था पार कर चुके हैं। अगर हम अभी भी नहीं सचेत हुए तो हमें इस विकास की कीमत सृष्टि के विनाश से चुकानी होगी, पृथ्वी का पर्यावरण नष्ट हो जायेगा। हर साल पूरे विश्व में 5 जून पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा निमित यह दिवस पर्यावरण के प्रति अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर राजनैतिक और सामाजिक जागृति लाने के लिए मनाया जाता है पर इस सबके लिए बहुत जरूरी है द्रढ इच्छा शक्ति की जो सरकार के साथ साथ हर मनुष्य में होनी चाहिए वरना पर्यावरण के नियन्त्रण तथा विकास को टिकाए रखने की जिम्मेदारी ना निभाने से पुरे विश्व को इसकी किमत चुकानी होगी।

कुछ विगत वर्षों में आईं आपदाएं-

1991 - उतराखण्ड भूकंप
1998 - मालपा भूस्खलन
1999 - चमोली भूकंप
2013 - उतराखण्ड बादल फटना
2021 - उतराखण्ड ग्लेशियर का टूटना

पश्चिम बंगाल/विधानसभा चुनाव 21

खेला तो होगा जबर

किसान आंदोलन और बढ़ती महंगाई के दौर में पांच राज्यों के चुनाव की लड़ाई कांटे की होने की संभावना

हरिमोहन मिश्र

सच्ची-मुच्ची ह्यखेला होबेह्न। कोलकाता से लेकर धुर देहात की दीवालों पर लिखा और जगह-जगह गूंजने वाला यह नारा मानो हाल में ही घोषित चार राज्यों पश्चिम बंगाल, असम, केरल, तमिलनाडु और एक केंद्रशासित पुदुच्चेरी में होने जा रहे विधानसभा चुनावों की ताशीर का अंदाजा दे रहा है। ऐसा नहीं है कि 26 फरवरी को चुनाव आयोग के चुनाव की तारीखों के ऐलान के बाद खेल शुरू हुआ। शुरूआत तो नवंबर में बिहार की विधानसभा चुनावों के संपन्न होने के बाद ही हो गई थी। अलबत्ता, कुछ अड़ंगा दिल्ली की सीमाओं पर 26 नवंबर से आ डटे किसान यूनियनों की वजह से लगा। लेकिन 26 जनवरी को लाल किले की घटना के बाद फोकस चुनावी राज्यों की ओर मुड़ गया। दनादन नेताओं के दौरे और योजनाओं-परियोजनाओं के ऐलान शुरू हो गए, जो चुनाव ऐलान की तारीख तक जारी रहे। लेकिन हर चुनाव अपनी राह अलग बनाता है और ऐन प्रचार या कई बार विभिन्न चरणों के मतदान के बीच मुद्दे बदलते देखे गए हैं। यह अनिश्चय इन चुनावों में कहीं ज्यादा देखा जा सकता है। इसी वजह से भिन्न-भिन्न चरणों के हिसाब से पार्टियां रणनीतियां भी बदलती रहती हैं। इस बार भी ऐसा देखने को मिलेगा ही।

शायद यही वजह है कि मतदान के चरण भी विवाद का विषय बन गए। इसकी एक वजह तो कई वर्षों से चुनाव आयोग की साख पर उठ रहे सवाल हैं, लेकिन खासकर बंगाल के मतदान आठ चरणों में बांटने पर राज्य में सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस ने न सिर्फ हैरानी जताई, बल्कि भाजपा की रणनीति का हिस्सा बताया, जिसके इन चुनावों में सबसे ज्यादा दांव बंगाल पर ही लगे हैं। तृणमूल नेता, मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने कहा, ह्लजो उसके (भाजपा के) दफ्तर में दिखा, वही ऐलान में पाया गया।ह्व वे इसके बेतुकेपन को जाहिर करने के लिए दक्षिण 24 परगना जिले का उदाहरण देती हैं, जिसके विधानसभा क्षेत्रों को तीन चरणों के मतदान में बांटा गया है। इस पर भाजपा की प्रतिक्रिया तो खास नहीं आई मगर कांग्रेस और वाम मोर्चे ने भी कोई खास शिकायत दर्ज नहीं कराई। बंगाल में इस विवाद की एक वजह यह भी बताई जा रही है कि दूसरे राज्यों असम (दो चरण), तमिलनाडु, केरल या पुदुच्चेरी में मतदान इतनी लंबी अवधि में नहीं फैलाए गए, जहां भाजपा का खास

दांव पर नहीं लगा है या उसे बड़ी चुनौती नहीं मिल रही है। केरल में उसकी नाममात्र की मौजूदगी है। तमिलनाडु में वह अन्नाद्रमुक गठजोड़ को जीतते देखना चाहती है, लेकिन वह छोटी खिलाड़ी है। द्रमुक-कांग्रेस गठजोड़ के जीतने से उसे केंद्र में ज्यादा दबाव झेलना पड़ सकता है। पुदुच्चेरी में हाल में चार विधायकों के इस्तीफे से कांग्रेस की एन. नारायणस्वामी की सरकार गिराकर उसने अपने दांव जरूर बढ़ाए हैं लेकिन वह बेहद छोटा राज्य है। वहां उसका मकसद सिर्फ कांग्रेस को कमजोर करना लगता है।

हां, असम में जरूर उसके दांव बड़े हैं, जहां पांच साल से उसकी अगप के साथ गठजोड़ में मुख्यमंत्री सवार्नंद सोनोवाल की सरकार है। लेकिन मुख्यमंत्री से भी ताकतवर नेता वित्त और स्वास्?थ्य मंत्री हेमंत बिस्वा सरमा की पूरी पूर्वोत्तर में तूती बोलती है। सरमा के ही जोड़तोड़ के करिश्मे से मणिपुर, त्रिपुरा, मिजोरम में उसकी सरकारें हैं। इसलिए वह असम में कोई कमजोरी नहीं देखना चाहेगी। उसे अपने इन दोनों नेताओं पर भरोसा है और हाल के कुछ जनमत सर्वेक्षणों में उसकी वोट हिस्सेदारी 46 फीसदी के आसपास आंकी गई है। लेकिन वहां भी कांग्रेस और बदरुद्दीन अजमल की पार्टी एआइयूडीएफ के साथ बोडोलैंड ट्राइबल फ्रंट (बीटीएफ) के गठजोड़ बना लेने से उसके लिए चुनौती कड़ी हो सकती है। बीटीएफ हाल तक एनडीए का हिस्सा था। भाजपा असम की 126 सीटों में से 100 पार का लक्ष्य रखे हुए है। कांग्रेस और एआइयूडीएफ भी इसी के आसपास सीटों पर दांव लगा रहे हैं लेकिन बीटीएफ के नेता ने कहा कि हमें 70 सीटों पर फोकस करना चाहिए, ताकि ताकत ज्यादा न बिखरे क्योंकि बहुमत का आंकड़ा 64 का है। इस वजह से भी चुनाव प्रबंधन की अहमियत बढ़ गई है। जाहिर है, प्रबंधन कौशल की सबसे अधिक दरकार 294 सीटों वाले बंगाल में ही है। इसलिए तृणमूल ने प्रशांत किशोर की टीम को इसकी जिम्मेदारी सौंपी है। भाजपा को केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह, पार्टी अध्यक्ष जेपी नड्डा, महासचिव कैलाश विजयवर्गीय के प्रबंधन पर भरोसा है और वे लगातार फोकस भी कर रहे हैं। लेकिन 28 फरवरी को कोलकाता के ब्रिगेड परेड ग्राउंड में विशाल रैली में वाम मोर्चा, कांग्रेस और फुरफुरा शरीफ दरगाह के मौलाना के इंडियन सेकूलर फ्रंट के गठजोड़ ने तीसरे मोर्चे की मौजूदगी दर्ज करा दी है, जिसे अभी तक खास अहमियत नहीं मिल रही थी। जानकार यही कयास लगा रहे हैं कि इससे तृणमूल को फायदा मिलेगा या भाजपा को। मगर 2016 के चुनावों में करीब 10 फीसदी से 2019 के संसदीय चुनावों में तकरीबन 40 फीसदी वोट हिस्सेदारी पाने वाली भाजपा को कांग्रेस और वाम मोर्चे से टूटकर गए वोटों का लाभ मिला था। अगर ये वोट मूल पार्टियों की ओर लौटते हैं तो भाजपा कमजोर हो सकती है। हालांकि भाजपा ने चुनावों के ठीक पहले तृणमूल के नेताओं को अपने पाले में लाकर कुछ विस्तार किया है। लेकिन ममता की लोकप्रियता अब भी काफी है और भाजपा या तीसरे मोर्चे का कोई नेतृत्व पद का चेहरा जाहिर नहीं है।

बहरहाल, केरल और तमिलनाडु में लड़ाई पहले से तय दो ध्रुवों के बीच ही होनी है। केरल में मुख्यमंत्री पिनराई विजयन की अगुआई में वाम लोकतांत्रिक मोर्चा की स्थिति कांग्रेस की अगुआई में संयुक्त लोकतांत्रिक मोर्चे से फिलहाल बेहतर बताई जा रही है। तमिलनाडु में मुख्यमंत्री ई. पलानीस्वामी के नेतृत्व में अन्नाद्रमुक के बरअक्स द्रमुक-कांग्रेस गठजोड़ की स्थिति बेहतर है। अन्नाद्रमुक के दस साल राज को सत्ता-विरोधी रुझान के साथ हाल में जेल से छूट कर आईं शशिकला से भी झटका मिल सकता है, बशर्ते उनके साथ कोई तालमेल न हो जाए। खेल इसलिए भी तीखा हो सकता है कि देश में किसान आंदोलन का दायरा बढ़ता जा रहा है और पेट्रोल-डीजल की कीमतें शतक के आसपास पहुंचने से महंगाई का दंश भी बढ़ रहा है। जो भी हो, 2 मई को नतीजे बेशक आगे की सियासत की राह तय कर सकती हैं।

बैड बैंक और निजीकरण

बैंक फॉर सेल

सरकारी बैंकों में निजी निवेश के लिए उसका एनपीए कम होना जरूरी है और बैड बैंक इसमें मददगार होगा, इसलिए बैंक निजीकरण और बैड बैंक का गठन, दोनों फैसलों को एक-दूसरे से जोड़कर देखा जाना चाहिए

इन दिनों एक बैंक की बहुत चर्चा है- बैड बैंक। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने 1 फरवरी 2021 को बजट में इसका जिक्र किया, जिस पर बाद में रिजर्व बैंक के गवर्नर शक्तिकांत दास ने भी सहमति जताई। बैंक और उद्योग जगत इस कदम से खुश हैं। बैंक इसलिए कि उनके डूबे कर्ज (एनपीए) कम होंगे। इंडस्ट्री इसलिए क्योंकि एनपीए कम होने के बाद बैंक उन्हें ज्यादा कर्ज दे सकेंगे। बजट में इस साल दो सरकारी बैंकों के निजीकरण की भी घोषणा हुई है।

एस.के. सिंह

दरअसल, बैंक निजीकरण और बैड बैंक का गठन, दोनों फैसले एक-दूसरे से जुड़े हैं। निजी हाथों में सरकारी बैंकों को सौंपने की अच्छी कीमत मिले, इसके लिए जरूरी है कि उसका एनपीए कम हो। बैड बैंक इसमें मददगार होगा। बैड बैंक और कुछ नहीं, बल्कि ऐसेट रिकंस्ट्रक्शन कंपनी (एआरसी) है। यह सामान्य बैंकों के एनपीए डिस्काउंट पर खरीदता है और बाद में उस एनपीए की रिकवरी की कोशिश करता है। देश में पहले से कई एआरसी हैं। नई एआरसी का स्वरूप राष्ट्रीय होगा। इसका गठन इसलिए किया जा रहा है क्योंकि मौजूदा एआरसी बहुत छोटे हैं। पिछले तीन वर्षों के दौरान इन्होंने बैंकों का सिर्फ छह फीसदी एनपीए खरीदा है।

बैंक निजीकरण और बैड बैंक का गठन, दोनों के लिए काफी तेजी से काम हो रहा है। बैड बैंक के लिए आवेदन मंगाने और नियुक्तियां करने में समय लगेगा, इसलिए कुछ सरकारी बैंकों के वरिष्ठ अधिकारियों को इसमें डेपुटेशन पर भेजा जा सकता है। इसमें सात सरकारी बैंकों, दो निजी बैंकों और दो सरकारी फाइनेंस कंपनियों की बराबर हिस्सेदारी हो सकती है। इंडियन बैंक्स एसोसिएशन ने सभी बैंकों से 500 करोड़ रुपये से ज्यादा के एनपीए की जानकारी मांगी है। इससे पता चलेगा कि बैड बैंक बनाने के लिए कितनी पूंजी चाहिए। शुरूआती आकलन के मुताबिक बैड बैंक 70 बड़े अकाउंट के दो से ढाई लाख करोड़ रुपये के एनपीए ले सकता है। निजीकरण के लिए भी बैंकों के नाम जल्दी ही तय हो सकते हैं। चर्चा है कि बैंक ऑफ महाराष्ट्र, बैंक ऑफ इंडिया, इंडियन ओवरसीज बैंक और सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया में से किन्हीं दो को चुना जा सकता है। निजीकरण से पहले उस बैंक का एनपीए बैड बैंक खरीद सकता है। बैंक को और आकर्षक बनाने के लिए उसके कुछ कर्मचारियों को दूसरे सरकारी बैंकों में ट्रांसफर किया जा सकता है। निजीकरण के पक्ष में यह दलील दी जाती है कि इससे मैनेजमेंट प्रोफेशनल होगा। लेकिन अतीत में निजी बैंकों में अनेक गड़बड़ियां पाई गई हैं। ऐसे में यह दलील कितनी सही है, इस पर क्रिसिल रेटिंग्स के सीनियर डायरेक्टर कृष्णन सीतारमण कहते हैं, ह्लहमें एक औसत देखना होगा। ऐसा नहीं कि सभी सरकारी बैंकों का प्रदर्शन खराब और निजी बैंकों का अच्छा है। लेकिन एनपीए के मामले में ज्यादातर निजी बैंक, सरकारी बैंकों से बेहतर हैं। पर्याप्त मॉनिटरिंग और सुपरविजन रहे तो निजीकरण में कोई बुराई नहीं है। यूनाइटेड फोरम ऑफ बैंक यूनियंस ने निजीकरण के फैसले के खिलाफ 15 और 16 मार्च को हड़ताल बुलाई है। संगठन के संयोजक देवीदास तुलजापुरकर का कहना है कि निजी बैंक ह्यएकाउंटिंग प्रॉफिटह्ल के लिए काम करेंगे, जबकि सरकारी बैंक ह्यसोशल प्रॉफिटह्ल के लिए काम करते हैं। सामाजिक योजनाओं में इन बैंकों का योगदान बहुत कम होता है। तुलजापुरकर के अनुसार जनधन योजना में निजी बैंकों की हिस्सेदारी पांच फीसदी से भी कम है। मुद्रा, स्वधन, स्टैंड अप इंडिया, मेक इन इंडिया योजनाओं का भी यही हाल है।

> सरकारी हस्तक्षेप का बढ़िया उदाहरण बैंकिंग बोर्ड ब्यूरो (बीबीबी) है। इसका गठन एक स्वायत्त बॉडी के तौर पर किया गया था। इसका काम सरकारी बैंकों में शीर्ष मैनेजमेंट की नियुक्ति में सरकार की मदद करना था। लेकिन मई 2017 में सरकार ने बिना इस बोर्ड के साथ मशविरा किए पंजाब नेशनल बैंक के एमडी को इलाहाबाद बैंक और बैंक ऑफ इंडिया के एमडी को सिंडिकेट बैंक भेज दिया। इससे बोर्ड के सदस्य काफी नाराज हुए और एक सदस्य ने तो इस्तीफा तक दे दिया था।

आगे फिर एनपीए बढ़ेगा

नए बैड बैंक का ढांचा कैसा होगा और यह कैसे काम करेगा, अभी स्पष्ट नहीं है। माना जा रहा है कि यह बैंकों से जिस कीमत पर एनपीए खरीदेगा, उसके बदले बैंकों को 15 फीसदी राशि नकद देगा। बाकी के बदले सिक्योरिटी रिसीट मिलेगी, जिस पर सरकार की गारंटी होगी। रिजर्व बैंक के 2016 के नियम के मुताबिक एआरसी को एनपीए बेचने पर बैंकों को उसके बदले प्रोविजनिंग यानी कुछ रकम अलग रखनी पड़ती है। इस नियम में ढील दी जा सकती है। इस कवायद में असली समस्या की कहीं चर्चा नहीं है, और वह है एनपीए इतना अधिक होते क्यों हैं। कोविड-19 जैसी आपदा को छोड़ दें, तब भी भारत पारंपरिक रूप से अधिक एनपीए वाला देश रहा है। जाने-माने अर्थशास्त्री प्रो. अरुण कुमार कहते हैं, ह्लसमस्या कहीं और है और समाधान कहीं और तलाशा जा रहा है। बैंकों पर नेताओं का हमेशा दबाव रहता है। बैंक अगर पूरी छानबीन के बाद किसी कंपनी को कर्ज दे तो एनपीए की गुंजाइश वैसे ही कम हो जाएगी। रिजर्व बैंक के अनुसार सितंबर 2020 में पूरे बैंकिंग सिस्टम का ग्रॉस एनपीए कुल कर्ज का 7.5 फीसदी था। कोरोना लॉकडाउन के कारण अर्थव्यवस्था में जो सुस्ती आई उससे सितंबर 2021 में एनपीए रिकॉर्ड 13.5 फीसदी तक जा सकता है। परिस्थितियां खराब रहीं तो यह 14.8 फीसदी तक भी चला जाएगा। सरकारी बैंकों का एनपीए तो 16.2 फीसदी तक पहुंच जाने का अंदेशा है जो सितंबर 2020 में 9.7 फीसदी था। रिजर्व बैंक की ही के.वी. कामत कमेटी का आकलन है कि कोविड-19 के चलते 15.52 लाख करोड़ रुपये के कर्ज एनपीए बन सकते हैं। कोविड से पहले भी 22.20 लाख करोड़ के कर्ज फंसे हुए थे। इस तरह उद्योग जगत को बैंकों की तरफ से दिए गए कुल कर्ज का 72 फीसदी फंसने का खतरा है। बैंकों में एनपीए छिपाने की प्रवृत्ति रही है। पूर्व आरबीआई गवर्नर रघुराम राजन के समय बैंकों के ऐसेट क्वालिटी रिव्यू में पता चला कि अनेक सरकारी और निजी बैंकों ने एनपीए छिपाया, ताकि उनकी बैलेंस शीट मजबूत दिखे। इस रिव्यू के बाद 2015-16 में सरकारी बैंकों का एनपीए लगभग 94 फीसदी बढ़ गया था। इसलिए आरबीआई के एक पूर्व एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर बैड बैंक को ह्यबैड आइडियाह्ल मानते हैं। नाम प्रकाशित न करने की शर्त पर उन्होंने कहा, ह्लइसके बाद तो बैंक और ढिलाई बरतने लगेंगे। उनमें यह प्रवृत्ति पनपने लगेगी कि अगर कोई कर्ज एनपीए हो गया तो उसे डिस्काउंट पर एआरसी को दे देंगे। बड़े कर्ज के आवेदन को मंजूरी के विभिन्न चरणों में जांचा जाता है। कंपनी की क्रेडिट रेटिंग और कर्ज के बदल रखी गई गिरवी देखी जाती है। कर्ज देने के बाद फॉलोअप और मॉनिटरिंग भी जरूरी है। इन नियमों का पालन नहीं होने के कारण ही एनपीए होते हैं। इसलिए प्रो. अरुण कुमार कहते हैं, ह्लबैड बैंक से अभी तो एनपीए की समस्या कम हो जाएगी, लेकिन कर्ज देने का तरीका नहीं सुधारा गया तो आगे फिर एनपीए बढ़ेगा।ह्व कृष्णन के अनुसार बैंक की मजबूत सेहत के लिए उसका रिस्क मैनेजमेंट अच्छा होना जरूरी है। बेहतर रिस्क मैनेजमेंट और क्रेडिट अप्रेजल के कारण ही प्राइवेट बैंकों का एनपीए कम है।

विदेशों में प्रयोग नाकाम

बैड बैंक की अवधारणा अमेरिका से आई है। वहां सबसे पहले मेलन बैंक ने 1988 में एआरसी बनाई थी। उसके बाद स्वीडन, फिनलैंड, फ्रांस, जर्मनी जैसे देशों में भी इसे आजमाया गया। लेकिन परिस्थितियों में एक बुनियादी फर्क है। ज्यादातर देशों में बैड बैंक होम लोन के लिए बने, जबकि भारत में होम लोन बहुत कम डिफॉल्ट होते हैं। यहां बड़े प्रोजेक्ट के लिए दिए जाने वाले बड़े कर्ज ही ज्यादा डिफॉल्ट करते हैं। इटली, तुर्की, दक्षिण कोरिया, अर्जेंटीना, ब्राजील जैसे देशों में बड़े कर्ज के लिए बने बैड बैंक सफल नहीं हुए। नई एआरसी में बैंकों की ही इक्विटी होगी। सवाल उठता है जब प्रमोटर बैंक ही अपना एनपीए उसे बेचेंगे तो क्या हितों का टकराव नहीं होगा? क्या बैड बैंक के प्रबंधन पर प्रमोटरों का दबाव नहीं होगा? रिजर्व बैंक के उपरोक्त ईडी तो हितों के टकराव की बात मानते हैं लेकिन आरबीआइ के पूर्व डिप्टी गवर्नर आर. गांधी इससे इनकार करते हैं।

वे कहते हैं, प्रमोटर होने का मतलब यह नहीं कि वे एआरसी का कामकाज भी तय करेंगे। काम प्रोफेशनल (मैनेजमेंट) करेंगे और वही देखेंगे कि एनपीए को किस कीमत पर खरीदना है।ह्व गांधी के अनुसार आज भी एआरसी खुली नीलामी में हिस्सा लेती हैं और डूबे कर्ज खरीदती हैं। एक और अहम सवाल है कि जब बैंकों का बनाया एआरसी डूबे कर्ज की रिकवरी कर सकता है तो बैंक खुद ऐसा क्यों नहीं कर सकते। गांधी के अनुसार एआरसी का मुख्य काम कर्ज की रिकवरी करना ही है, जबकि बैंकों को और भी काम करने पड़ते हैं। गांधी के मुताबिक एनपीए की रिकवरी के लिए विशेष स्किल की जरूरत पड़ती है। यह स्किल बैंकों के पास भी होती है, लेकिन एआरसी में इसकी विशेषज्ञता वाले लोग ही रखे जाते हैं। यही बात क्रिसिल के कृष्णन सीतारमण ने भी कही। लेकिन उक्त पूर्व ईडी इससे इत्तेफाक नहीं रखते। वे कहते हैं कि कोई एआरसी किसी अनुभवी बैंक से बेहतर कैसे हो सकता है। बैंकों के पास रिकवरी और मॉनिटरिंग का अलग डिपार्टमेंट होता है। वे कर्ज की वसूली क्यों नहीं कर सकते। वे सवाल करते हैं, ह्लजिन खातों पर बैंकों को बड़ा नुकसान होता है, उन पर एआरसी को बड़ा मुनाफा कैसे होने लगता है? जो बात एक के लिए जहर है, वह दूसरे के लिए अमृत कैसे बन जाती है?

एसबीआइ के एक पूर्व अधिकारी के अनुसार ज्यादातर बैंकों ने डूबे कर्ज की वसूली के लिए अलग इकाई बना रखी है। जैसे एसबीआइ के पास छोटे कर्ज की रिकवरी के लिए स्ट्रेस्ड ऐसेट रिकवरी ब्रांच और बड़े अकाउंट के लिए स्ट्रेस्ड असेट्स मैनेजमेंट ब्रांच है। इनका काम कर्ज वसूलने के लिए कानूनी कार्रवाई करना, संपत्ति का मूल्यांकन करना आदि होता है। फिर भी वे गांधी की बात का समर्थन करते हुए कहते हैं कि डूबे कर्ज की वसूली अलग तरह का जॉब है। इसके लिए कानूनी पहलुओं की अच्छी जानकारी जरूरी है वर्ना रिकवरी अटक सकती है। पहले भी ऐसेट रिकंस्ट्रक्शन कंपनी इंडिया लिमिटेड (आर्सिल) का गठन हुआ, लेकिन उसका कोई खास नतीजा नहीं निकला। एक तो उसके पास प्रशिक्षित कर्मचारी नहीं थे। दूसरी सबसे बड़ी दिक्कत संपत्ति के मूल्यांकन को लेकर होती है। बैंक चाहते हैं कि एनपीए के जितने हिस्से की उन्होंने प्रोविजनिंग की है, कम से कम उतनी कीमत तो मिले। दूसरी ओर, एआरसी भी कम से कम कीमत में एनपीए खरीदना चाहती हैं। एसबीआइ के उक्त अधिकारी के अनुसार अगर बैड बैंक में भी यही व्यवस्था रही तो इसका सफल होना भी मुश्किल है।

बैड बैंक की सफलता काफी हद तक इस बात पर निर्भर करेगी कि उसका मैनेजमेंट कितना प्रोफेशनल है और कामकाज में सरकार का कितना हस्तक्षेप रहता है। इन दोनों मोर्चों पर पुराना अनुभव अच्छा नहीं है। आइडीबीआइ का ग्रॉस एनपीए 2005 में 12,945 करोड़ रुपये था। विशेष पैकेज के तहत इसका 9,000 करोड़ रुपये का एनपीए स्ट्रेस्ड ऐसेट स्टेबलाइजेशन फंड में ट्रांसफर किया गया था। लेकिन बैंक के कामकाज का तरीका वही रहा। नतीजा, सरकार को आगे भी इसमें पैसे डालने पड़े। आज भी यह सबसे ज्यादा एनपीए वाले बैंकों में है। 31 दिसंबर 2020 को इसका ग्रॉस एनपीए 23.52 फीसदी और एक साल पहले 28.72 फीसदी था। सरकारी हस्तक्षेप का बढ़िया उदाहरण बैंकिंग बोर्ड ब्यूरो (बीबीबी) है। इसका गठन एक स्वायत्त बॉडी के तौर पर किया गया था। इसका काम सरकारी बैंकों में शीर्ष मैनेजमेंट की नियुक्ति में सरकार की मदद करना था। लेकिन मई 2017 में सरकार ने बिना इस बोर्ड के साथ मशविरा किए पंजाब नेशनल बैंक के एमडी को इलाहाबाद बैंक और बैंक ऑफ इंडिया के एमडी को सिंडिकेट बैंक भेज दिया। इससे बोर्ड के सदस्य काफी नाराज हुए और एक सदस्य ने तो इस्तीफा तक दे दिया था। बैड बैंक सफल रहा तो इससे बैंकों और अंततः अर्थव्यवस्था को तात्कालिक राहत तो मिल जाएगी, लेकिन आगे एनपीए की समस्या दोबारा खड़ी न हो इसके लिए बैंकों के कामकाज में बदलाव जरूरी है। वरना जैसा कि आरबीआइ के पूर्व गवर्नर रघुराम राजन ने अपनी किताब ह्यआइ डू व्हाट आइ डूह्ल में लिखा है कि बैड बैंक सरकार की एक जेब से दूसरी जेब में पैसा डालने जैसा है। या फिर जैसा प्रो. अरुण कुमार कहते हैं, ह्लबड़े लोन अकाउंट एनपीए बनते रहेंगे और सरकार करदाताओं का पैसा बैंकों में लगाती रहेगी। कृष्णन के अनुसार पिछले 10 वर्षों में सरकार ने बैंकों में लगभग 3.83 लाख करोड़ रुपये डाले हैं। मौजूदा वित्त वर्ष में 20 हजार करोड़ रुपये निवेश का प्रावधान है, इसमें से अभी तक 5.5 हजार करोड़ दिए हैं। अगर मार्च तक सरकार बाकी 14.5 हजार करोड़ भी दे देती है तो 10 वर्षों में रकम 3.98 लाख करोड़ रुपये हो जाएगी। करदाताओं का पैसा बैंकों में लगाने पर उनका कहना है, ह्लसार्वजनिक बैंक में बड़ी हिस्सेदारी सरकार की होती है। इसलिए बैंक को बचाना उसी की जिम्मेदारी है। बैंक में जमा पैसा भी करदाताओं का ही है। अगर सरकार निवेश नहीं करती है और उसमें जमा पैसा डूबता है तो समस्या और बड़ी हो जाएगी।

कृष्णन का सुझाव है कि सरकारी बैंकों को आमदनी बढ़ाने के नए रास्ते तलाशने चाहिए। प्राइवेट और विदेशी बैंक कर्ज देने के अलावा फीस लेकर सेवाएं भी देते हैं। इससे उन्हें खासी आमदनी होती है। सरकारी बैंक ऐसा कम ही करते हैं। कृष्णन कहते हैं, एक या दो पीढ़ी पहले सरकारी बैंक में नौकरी पाना लोगों का सपना हुआ करता था, लेकिन अब ऐसा नहीं है। अब युवा प्राइवेट बैंक को तरजीह देते हैं। सरकारी बैंकों को प्रतिभावान युवाओं को आकर्षित करना चाहिए, क्योंकि आखिरकार लोग ही तो बैंक को चलाते हैं।

“कृष्णन का सुझाव है कि सरकारी बैंकों को आमदनी बढ़ाने के नए रास्ते तलाशने चाहिए। प्राइवेट और विदेशी बैंक कर्ज देने के अलावा फीस लेकर सेवाएं भी देते हैं। इससे उन्हें खासी आमदनी होती है। सरकारी बैंक ऐसा कम ही करते हैं। कृष्णन कहते हैं, एक या दो पीढ़ी पहले सरकारी बैंक में नौकरी पाना लोगों का सपना हुआ करता था, लेकिन अब ऐसा नहीं है। अब युवा प्राइवेट बैंक को तरजीह देते हैं। सरकारी बैंकों को प्रतिभावान युवाओं को आकर्षित करना चाहिए, क्योंकि आखिरकार लोग ही तो बैंक को चलाते हैं।”

आखिर कब रुकेगी सामंती कुप्रथा

हर्ष फायरिंग

आगरा के एत्मादपुर में हाल ही में एक शादी समारोह में हर्ष फायरिंग की घटना सामने आने से यह सिद्ध हो गया है कि कानून बन जाने के बावजूद इस प्रकार की घटनाएँ रुक नहीं रही हैं। नाम तो है हर्ष फायरिंग लेकिन हर्ष को विषाद और खुशी को मातम में बदल देने वाली हर्ष फायरिंग कड़े कानून और अकाल मौतों की घटनाओं के बावजूद कम होने का नाम नहीं ले रही हैं। कहीं डांसर तो कहीं बेंडवालों, कहीं बारात देख रहे बच्चों और महिलाओं तो कहीं दूल्हा दुल्हन या उनके रिश्तेदारों को ही गोली लग जाती है। लोग घायल हो जाते हैं या मौत के मुँह में भी समा जाते हैं। हर्ष फायरिंग अब केवल बारातों तक ही सीमित नहीं रह गई है। जन्मदिन, शादी की वर्षगाँठ, विजय जुलूस, छठ पूजन, नए साल का जश्न, धार्मिक आयोजनों आदि आदि किसी भी खुशी के अवसर पर खुलेआम इसका भोंडा प्रदर्शन किया जा रहा है। इसके अलावा पहले यह गांवों तक ही सीमित थी परंतु अब शहरों, अभिजात्य वर्ग, यहाँ तक कि कानून बनाने वाले नेताओं को भी कोई परहेज नहीं रह गया है और फायरिंग को खुशी के इजहार का माध्यम बना दिया गया है।

सर्वज्ञ शेखर

समाजविज्ञानियों के अनुसार हथियारों का प्रदर्शन सामंतवाद से प्रभावित है। शक्ति प्रदर्शन पुराने जमाने में जरूरी होता था। राजे रजवाड़ों के यहां शादी विवाह के मौकों पर प्रशिक्षित तलवार बाज आदि आते थे। शादी और खुशी के मौकों पर कई तरह के खेल खेले जाते थे। असलहों का प्रदर्शन किया जाता था। यह भी कहा जाता है कि लोगों को शादी की जानकारी देने के लिए भी तेज ढोल नगाड़े बजाए जाते थे, आतिशबाजी की जाती थी। बदलते समय के साथ तलवार की जगह दुनाली, तमंचे और बंदूकों ने ली। अब शादी विवाह के मौकों पर वे अपनी सामर्थ्य और शक्ति का प्रदर्शन करते हैं और गांव वाले, मुहल्ले वाले देखते हैं। सामंतीयुग में दूल्हा-दुलहन के परिवार वाले एक दूसरे से ज्यादा ताकतवर दिखने के लिए हवाई फायरिंग किया करते थे। जैसे ही समय बदला बाजारवाद आया। ऐसा लगा कि इन हथियारों का का चलन कम होगा, लेकिन यह और बढ़ गया। उत्तर प्रदेश के कन्नौज में इसी नव वर्ष की पूर्व संध्या पर रायफल से कई राउंड हर्ष फायरिंग करने वाले पांचों आरोपियों को इंदरगढ़ पुलिस ने गिरफ्तार किया। पांचों युवकों का हर्ष फायरिंग करते हुए वीडियो सोशल मीडिया पर वायरल हुआ था। मेरठ में इसी माह के शुरू में नए साल के जश्न में क्राइम ब्रांच के सिपाही सौरभ यादव को गोली लगी थी। हाईवे स्थित होटल में नए साल की पूर्व संध्या पर तमंचे पर डिस्को चल रहा था। माना जा रहा है कि सिपाही को हर्ष फायरिंग में गोली लगी ।ऐसा भी कहा गया कि किसी विवाद में सिपाही के एक दोस्त ने उसे गोली मारी। इसी प्रकार की पिछले कुछ माह की अन्य घटनाओं में 29 दिसंबर 2020 को उत्तर प्रदेश के बदायूं जिले के ककराला इलाके में एक बरातघर में शादी के दौरान हर्ष फायरिंग के दौरान गोली लगने से एक युवक की मौत हो गई। इससे हड़कंप मच गया। सभी लोग खाना छोड़कर मौके से भाग गए।13 दिसंबर 2020 को बिहार के भोजपुर जिले में हर्ष फायरिंग के दौरान गोली लगने से दो युवकों की मौत हो गई।12 दिसंबर 2020 को मध्यप्रदेश के राजगढ़ जिले के लहारची गांव में एक विवाह समारोह के दौरान की गई हर्ष फायरिंग से 12 वर्षीय एक लड़के की मौत हो गई।24 नवंबर 2020 को उत्तर प्रदेश के अमरोहा में शादी समारोह में उस समय रंग में भंग पड़ गया जब हर्ष फायरिंग के दौरान दूल्हे के एक करीबी दोस्त को पेट में गोली लग गई। यह तो कुछ उदाहरण हैं। ऐसी दस बीस नहीं बल्कि सैंकडों दुर्भाग्यशाली घटनाएं पिछले कुछ वर्षों में घटित हो चुकी हैं। ऐसा नहीं है कि हर्ष फायरिंग को रोकने के लिए कोई कानून नहीं है। केंद्र सरकार ने शस्त्र संशोधन विधेयक 2019 को संसद से मंजूर करा लिया है। शस्त्र संशोधन विधेयक 2019 में हर्ष फायरिंग को अपराध घोषित करके फायरिंग करने वालों को दो साल की कैद और 1 लाख रुपये जुमार्ने की भी प्रावधान किया गया है। गृहमंत्री अमित शाह ने विधेयक पर चर्चा के दौरान बताया कि यह गलत धारणा है कि लाइसेंसी हथियारों

से हर्ष फायरिंग में किसी की जान नहीं जाती। 2016 में उत्तर प्रदेश में 191, बिहार में 12 और झारखंड में 14 लोगों की जान लाइसेंसी हथियारों से की गई हर्ष फायरिंग में गई थी। कानून बन तो गया पर कानून का किसी को भय नहीं हैं। अधिकांश मामलों में घटना हो जाने के उपराँत कार्यवाही की गई है, घटना को होने से रोक पाने में कानून के रखवाले असमर्थ रहे हैं। 2016 में दिल्ली हाईकोर्ट ने कहा था कि शादी व अन्य उत्सवों में होने वाली हर्ष फायरिंग के दौरान कोई हादसा होता है तो इसके लिए शादी अथवा उत्सव के आयोजकों को भी जिम्मेदार माना जाएगा। यह बात एक पिता की ओर से दायर मुआवजा याचिका पर सुनवाई के दौरान कही। याची की नाबालिग बेटी की अप्रैल 2016 में घुड़चढ़ी के दौरान हर्ष फायरिंग में गोली लगने से मौत हो गई थी। जस्टिस विभू बाखरू ने कहा था कि कार्यक्रम व उत्सव आयोजक को तय करना होगा कि उसके मेहमान हर्ष फायरिंग नहीं करेंगे। अगर हर्ष फायरिंग की जाती है तो वह इसकी जानकारी पुलिस को देंगे। कोर्ट ने यह भी कहा कि इस मामले में कुछ न कुछ किया जाना चाहिए। अगर सरकार कोई दिशा-निर्देश नहीं बनाती है तब तक आयोजक को ही इसके लिए जिम्मेदार माना जाएगा। आप यह नहीं कह सकते कि हर्ष फायरिंग की आपको जानकारी नहीं थी या अपने रिश्तेदारों को हथियार लाने के लिए नहीं कहा था। यह सही है कि असलाह धारकों को यदि कानून से भय नहीं है तो कार्यक्रम के आयोजकों को ही बचाव के लिए कुछ करना होगा। उन्हें इतनी हिम्मत करनी होगी कि कोई कितना भी प्रभावशाली या दबंग ही क्यों न हो, हथियारों के साथ प्रवेश ही न कर पाएँ। निमंत्रण पत्र पर भी हथियार सहित न आने का संदेश दिया जा सकता है। हर्ष फायरिंग करने वालों को हर हाल में हताश करना ही होगा।

वायु प्रदूषण से निपटना जरूरी

ज्ञानेंद्र रावत

वायु प्रदूषण के मामले में हमारी स्थिति दुनिया में सबसे ज्यादा खराब है। एक स्विस ऑर्गनाइजेशन द्वारा तैयार 'वर्ल्ड एयर क्वालिटी रिपोर्ट, 2020 ' में बताया गया है कि दुनिया के 30 सबसे अधिक प्रदूषित शहरों में हमारे देश के 22 शहर शामिल हैं। हमारे यहां वायु की गुणवत्ता इतनी खराब है कि अस्थमा, हृदय रोग, फेफड़ों के रोग समेत अनेक जानलेवा बीमारियों से जूझते रोगियों की तादाद दिनों-दिन बढ़ रही है.यह इस बात का संकेत है कि प्रदूषण के मामले में देश की हालत चिंताजनक है। हमारा देश दुनिया के सबसे ज्यादा प्रदूषित देशों की सूची में पांचवे स्थान पर है.इस सूची में पहला स्थान बांग्लादेश, दूसरा पाकिस्तान, तीसरा मंगोलिया और चौथा अफगानिस्तान का है। हवा के प्रदूषित होने से इनमें घुलनेवाले छोटे-छोटे कण सांस के जरिये हमारे फेफड़ों तक पहुंचते हैं, फिर हृदय, फेफड़ों, सांस आदि रोगों में वृद्धि करते हैं. दिल्ली स्थित गोविद बल्लभ पंत अस्पताल में प्रतिदिन इन रोगियों की बढ़ती संख्या इस बात का सबूत है कि देश की राजधानी भी प्रदूषण से अछूती नहीं है।

देश की राजधानी ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र भी प्रदूषण से बहुत ज्यादा त्रस्त है. दिल्ली विश्व की सबसे ज्यादा प्रदूषित राजधानी है. गाजियाबाद तो प्रदूषण में शीर्ष स्थान पर है, जो स्वास्थ्य मानकों के लिहाज से बेहद खतरनाक है.देश के वे 22 शहर, जो विश्व के सर्वाधिक प्रदूषित 30 शहरों में शामिल हैं, वहां वायु प्रदूषण का स्तर भयावह स्तर तक पहुंच गया है.दुखद है कि इस भयावह स्थिति को देखते हुए भी सरकार मौन है. केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और प्रदूषण पर नियंत्रण करनेवाली अन्य संस्थाएं भी इस दिशा में नाकाम साबित हुई हैं. अगर वायु प्रदूषण फैलाने वाले कारकों पर नियंत्रण लगा होता, तो देश को इतनी भयावह स्थिति का सामना नहीं करना पड़ता.प्रदूषण का यह स्तर हमारी असफलता का सबूत है.वायु प्रदूषण के इतने व्यापक पैमाने पर फैलने का कारण वाहनों की दिनों-दिन बढ़ती संख्या, भवन निर्माण पर प्रतिबंध का नाकाम रहना, भवन निर्माण सामग्री का खुलआम सड़कों पर पड़े रहना और औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकलने वाला जहरीला धुआं है. इसे विडंबना ही कहेंगे कि वायु प्रदूषण बढ़ने के लिए अक्सर किसानों द्वारा पराली जलाने को जिम्मेदार ठहरा दिया जाता है. जबकि वैज्ञानिक अनुसंधान के आधार पर पराली केवल 2।37 प्रतिशत प्रदूषण के लिए ही जिम्मेदार है. वायु प्रदूषण बढ़ाने में जब पराली का स्तर इतना निम्न है, तो हम कैसे यह कहने के अधिकारी हैं कि प्रदूषण बढ़ाने में पराली का योगदान है. आज से छह साल पहले सरकार ने घोषणा की थी कि एनटीपीसी पराली को खरीदेगी और उससे गैस बनायेगी, लेकिन इस दिशा में अभी तक कोई कारगर पहल नहीं हुई है.कुछ प्रतिशत पराली की खरीद तो हुई है, लेकिन उसका कितना इस्तेमाल हुआ है और उससे कितनी गैस बनी है, सरकार उसका विवरण अभी तक नहीं दे पायी है। पार्टिकुलेट मैटर भी खतरनाक स्तर को पार कर गया है, लेकिन इसे लेकर सरकार की चिंता नगण्य है. प्रदूषण चाहे वायु का हो या जल का, बढ़ता ही जा रहा है। प्रदूषण पर जल्द ही लगाम लगनी चाहिए। उत्तराखंड की त्रासदियां पर्यावरण विरोधी नीतियों का ही परिणाम है.गंगा को लें, तो वह 2014 के बाद से आज 20 गुना ज्यादा मैली है और उस पर बन रहे बांध गंगा जल के विलक्षण गुण को नष्ट करने के प्रमुख कारण हैं.लॉकडाउन से उपजी परेशानियों को छोड़ दें, तो इस दौरान हमारी प्राकृतिक संपदा, पर्यावरण, नदियों और वायु की गुणवत्ता को सबसे ज्यादा लाभ पहुंचा है. चूंकि इस दौरान सड़कों पर वाहनों की आवाजाही पर प्रतिबंध थे, जिससे वायु प्रदूषण घटा और प्रकृति की हरियाली लौट आयी. नदियों का जल साफ हुआ. लॉकडाउन पर्यावरण सरंक्षण की दिशा में अहम कारक साबित हुआ, लेकिन लॉकडाउन के बाद जैसे ही पाबंदियां हटीं, हर तरह के प्रदूषण के स्तर में वृद्धि हो गयी.वायु प्रदूषण को कम करने के लिए सरकार द्वारा बनायी जाने वाली विकास नीति पर्यावरण के हित में होनी चाहिए, उसकी विरोधी नहीं.लेकिन आजादी से लेकर आज तक कभी भी सरकार ने पर्यावरण अनुकूल विकास नीतियां नहीं बनायी हैं. आज से 110 वर्ष पहले महात्मा गांधी ने कहा था कि मानव यंत्र का गुलाम न हो. यंत्र एक सहायक की भूमिका में हो. वर्तमान स्थिति उसके एकदम उलट है.हम भले ही विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में, महाशक्तियों के साथ खड़े होने का दावा करें, हम उससे कोसों दूर हैं. जब विकास जनहितकारी होगा, पर्यावरण हितैषी होगा, तभी देश की प्राकृतिक संपदा सुरक्षित रह पायेगी. आज हमारे देश की 67। 4 प्रतिशत भूमि बंजर हो चुकी है.यह सब बढ़ते तापमान और जलवायु परिवर्तन का दुष्परिणाम है. यदि हमने अभी इसे नहीं रोका, तो बहुत जल्द हम दाने-दाने को मोहताज हो जायेंगे.समय आ गया है कि हम भौतिक संसाधनों की अंधी चाहत की ओर न दौड़ें, प्रकृतिप्रदत्त संसाधनों की रक्षा करें क्योंकि ये सीमित हैं. विकास जब-जब मानवीय हितों के विपरित होता है, उसका दुष्परिणाम आर्थिक, सामाजिक और भौगोलिक स्तर के साथ प्राकृतिक संपदा पर भी होता है.इसलिए हमारा पहला कर्तव्य है कि हम मानवहित और प्रकृतिप्रदत्त संसाधनों की रक्षा की नीतियां बनाएं।

> “हम भले ही विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में, महाशक्तियों के साथ खड़े होने का दावा करें, हम उससे कोसों दूर हैं। जब विकास जनहितकारी होगा, पर्यावरण हितैषी होगा, तभी देश की प्राकृतिक संपदा सुरक्षित रह पायेगी। आज हमारे देश की 67। 4 प्रतिशत भूमि बंजर हो चुकी है.यह सब बढ़ते तापमान और जलवायु परिवर्तन का दुष्परिणाम है। यदि हमने अभी इसे नहीं रोका, तो बहुत जल्द हम दाने-दाने को मोहताज हो जायेंगे।”

दिल्ली में ठंड के दिनों में घने कोहरे के बीच प्रगति मैदान का विश्व पुस्तक मेला बहुप्रतिक्षित रहता है। कोरोना आपदा के चलते भले ही वह पुस्तक-कुंभ न लग पाया हो, लेकिन पुस्तकों को जन-जन तक पहुंचाने के लिए कृतसंकल्प राष्ट्रीय पुस्तक न्यास (एनबीटी) ने देश-दुनिया के पुस्तक प्रेमियों के घर तक विश्व पुस्तक मेले को पहुंचा कर दुनिया के सबसे बड़े वर्चुअल पुस्तक मेले का आयोजन कर दिया। गत पांच से नौ मार्च तक चले नयी दिल्ली विश्व पुस्तक मेले के पहले वर्चुअल संस्करण ने आगंतुकों, खरीदारों और साहित्यिक आयोजनों का विश्व-कीर्तिमान स्थापित कर दिया है। भारत ने दुनिया को दिखा दिया कि कोई भी आपदा देश की सृजनात्मकता, वैचारिकी और ज्ञान-प्रसार में आड़े नहीं आ सकती।

कोरोना से नहीं डरतीं किताबें

पंकज चतुर्वेदी

ऐसा पहला अनुभव होने के बावजूद न आगंतुकों का उत्साह कम हुआ और न ही प्रकाशकों का। इस पुस्तक मेले में 135 से अधिक भारतीय और 15 से अधिक विदेशी प्रकाशकों ने सहभागिता दर्ज करायी। एक अनजान व अदृश्य जीवाणु ने जब दुनिया की चहलकदमी रोक दी, फिर भी कोई भी भय इंसान की सृजनात्मकता, विचारशीलता और उसे शब्दो में पिरो कर प्रस्तुत करने की क्षमता पर अंकुश नहीं लगा पाया। इस अजीब परिवेश ने न केवल लिखने के नये विषय दिये, बल्कि इसमें लेखक-पाठक की दूरियां कम हुईं, तकनीक से मुहल्ले व कस्बों के विमर्श अंतरराष्ट्रीय हो गये। शुरूआत में जब मुद्रण संस्थान ठप रहे, तब सारी दुनिया की तरह पुस्तकों की दुनिया में भी कुछ निराशा-अंदेशा व्याप्त था। लेकिन घर में बंद समाज को त्रासदी के पहले हफ्ते में ही भान हो गया कि पुस्तकें ऐसा माध्यम हैं, जो सामाजिक दूरी को ध्यान में रखते हुए घरों में अवसाद से मुक्ति दिलाने में महती भूमिका निभाती हैं और ज्ञान का प्रसार भी करती हैं। भय भरे माहौल में लॉकडाउन में सकारात्मक सोच के साथ पठन-पाठन से लोगों को जोड़ने के लिए कई अभिनव प्रयोग किये गये।

प्रगति मैदान के पुस्तक मेले की लगभग तीन दशक से चल रहे अनवरत सिलसिले के टूटने पर निराश होना लाजिमी थी, लेकिन वर्चुअल पुस्तक मेले ने इस कमी को काफी कुछ पूरा किया। कुछ नहीं से कुछ होना भला है, परंतु छोटे प्रकाशकों, दूरस्थ अंचल के लेखकों व पाठकों के लिए तो प्रगति मैदान की भीड़ में किताबों के कुंभ में गोते लगाना ही पुस्तक मेला कहलाता है। कंप्यूटर संचालित इस आधुनिक व्यवस्था को भले ही नाम मेला का दिया गया हो, लेकिन आम लोगों के लिए तो सीमित तंत्र है। पुस्तकों की संख्या कम होती है, भुगतान को लेकर भी दिक्कतें हैं। असल में मैदान में लगनेवाला मेला पुस्तकों के साथ जीने, उसे महसूस करने का उत्सव होता है, जिसमें गीत-संगीत, आलोचना, मनुहार, मिलन, असहमतियां और सही मायने में देश की विविधतापूर्ण भाषायी एकता की प्रदर्शनी भी होती है। बीते एक साल में लेखकों और प्रकाशकों ने यह भांप लिया कि कोरोना के चलते लोगों की पठन अभिरूचि, जीवन शैली, अर्थतंत्र आदि में आमूल-चूल बदलाव होंगे। एनबीटी ने अपनी कई सौ लोकप्रिय पुस्तकों को निशुल्क पढ़ने के लिए वेबसाइट पर डाल दिया, तो राजकमल प्रकाशन ने पाठक के घर तक पुस्तकें पहुंचाने की योजना शुरू कर दी। कई अन्य प्रकाशक भी डिजिटल प्लेटफॉर्म को प्राथमिकता देने लगे।

लखनऊ में भी पुस्तक मेला हुआ और कई जगह प्रदर्शनी भी लग रही हैं। ऐसा नहीं है कि कोरोना संकट के साथ आये बदलावों से प्रकाशन व लेखन में सभी कुछ अच्छा ही हुआ है। नयी तकनीक ने भले ही ज्ञान के क्षेत्र में क्रांति ला दी है, लेकिन मुद्रित पुस्तकें आज भी विचारों के आदान-प्रदान का सबसे सशक्त माध्यम हैं।

हालांकि अभी ईबुक अधिक लोकप्रिय नहीं हुआ है, लेकिन बच्चों में ऑडियो बुक्स का प्रचलन बढ़ा है। बुद्धिजीवी वर्ग को समझने में ज्यादा देर नहीं लगी कि इस महामारी ने हमें अपनी जीवन शैली में बदलाव के लिए मजबूर किया है और इससे पठन अभिरूचि भी अछूती नहीं हैं। लोगों ने पहले फेसबुक जैसे निशुल्क प्लेटफॉर्म पर रचना पाठ, गोष्ठी, लेखक से मुलाकात और रचनाओं की ऑडियो-वीडियो प्रस्तुति प्रारंभ की और फिर जूम, गूगल, जैसे कई नये मंच आ गये। मोबाइल या कंप्यूटर पर लेखक को सुनने या सवाल करने का मोह घर के वे सदस्य भी नहीं छोड़ पाये, जो अभी तक पठन-पाठन से दूरी बनाये रखते थे। नवंबर में दिल्ली में फेडरेशन आफ इंडियन पब्लिशर्स ने तीन दिन का एक वर्चुअल पुस्तक मेला किया था, जिसे विश्व का सबसे बड़ा वर्चुअल बुक फेयर कहा गया। दिसंबर में इंडिया इंटरनेशनल साइंस कांग्रेस में भी पुस्तक मेला के लिए एक स्थान था। तीस दिसंबर से दस जनवरी तक गुवाहाटी पुस्तक मेला हुआ और जहां हर दिन पचास हजार पुस्तक प्रेमियों ने पहुंच कर जता दिया कि अपनी पठन-पिपासा के लिए वे कोरोना वायरस से डर नहीं रहे।

लखनऊ में भी पुस्तक मेला हुआ और कई जगह प्रदर्शनी भी लग रही हैं। ऐसा नहीं है कि कोरोना संकट के साथ आये बदलावों से प्रकाशन व लेखन में सभी कुछ अच्छा ही हुआ है। नयी तकनीक ने भले ही ज्ञान के क्षेत्र में क्रांति ला दी है, लेकिन मुद्रित पुस्तकें आज भी विचारों के आदान-प्रदान का सबसे सशक्त माध्यम हैं। वे जरूरी शिक्षा और साक्षरता का एकमात्र साधन भी हैं। हमारी बड़ी आबादी अभी भी डिजिटल माध्यमों से गंभीरता से परिचित नहीं हैं। हमारे प्रकाशन उद्योग की विकास दर पिछले साल तक बीस प्रतिशत सालाना रही, जो अब थम गयी है। लेकिन विषम स्थिति में भी बोधि प्रकाशन (जयपुर) जैसे संस्थान उम्मीद की लौ बरकरार रखते हुए सौ रुपए में दस पुस्तकों के सेट मुहैया करा रहे हैं। यह एक बानगी है कि किताबें हर विषम स्थिति का मुकाबला करते हुए किसी भी तकनीकी से जुड़ कर ज्ञान की ज्योति प्रज्जवलित रखती हैं।

मिट्टी की गुल्लक

इस गुल्लक में हर घर की कहानियां संभालकर रखी हुई हैं

लेखिका
संगीता झा

प्रकाशक
डायमंड बुक्स

मूल्य
रु. 150 (पेपरबैक)

डॉ. संगीता झा हैदराबाद की जानी मानी एंडोक्राइन सर्जन हैं। उनकी कृति ह्यमिट्टी की गुल्लकह्न उनके हिसाब से कहानी संग्रह है, जिसमें उनकी 21 कहानियां संकलित हैं। उनके हिसाब से कह रहा हूं तो जाहिर है कि मैं उनसे सहमत नहीं हूं। मेरे सहमत न होने के पीछे एक बड़ा कारण यह है कि यह कृति मुन्नी के जन्म से लेकर उसके बचपन, किशोरावस्था और सेटल हो जाने, दो युवा बेटियों की मां बनने तक की पूरी कहानी कहती है। उसके जीवन में आए व्यक्तियों के शब्द चित्र प्रस्तुत करती है। मेरे हिसाब से इसे उपन्यास कहना उचित होता। या फिर जीवनी/आत्मकथा या फिर संस्मरण। खैर जब लेखिका ने इसे कहानी संग्रह कहा है तो हम कौन होते हैं इसका नामकरण करने वाले।

सुभाष चंदर

पर यह जो कुछ भी है, अपने थोड़े से अनगढ़पन के बावजूद एक ऐसी कृति है जो पाठक को शुरू से अंत तक बांधे रखने में सफल रहती है। बेहद सरल, सहज भाषा में एक छोटी किन्तु बेहद शरारती बच्ची के कारनामे, किशोरावस्था में चीजों को पकड़ने की एक विशेष दृष्टि, पिता के साथ के संबंधों की जटिलता, जीवन में आने वाले व्यक्तियों के रोचक खाके, चरित्रों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आदि पाठक को किताब से ऐसे जोड़ देंगे कि वह उन्हें हमेशा याद रखेगा। कृति में जहां एक से एक रोचक प्रसंग हैं जो बरबस आपके अधरों पर मुस्कान ले आते हैं। ऐसे प्रसंगों में मुन्नी का अपनी सहेलियों से झूठ बोलना कि सायरा बानो उसकी रिश्तेदार है। फिर उस झूठ को निभाने के लिए अपनी बुआ का इस्तेमाल करना आदि शामिल हैं। ऐसे ही एक प्रसंग में मुन्नी अपने भाईयों के साथ गुल्लक में बहुत दिनों तक पैसे जोड़ती है ताकि वह कपड़े और भाई फुटबॉल खरीद सकें। पर एक दिन भाई से झगड़ा हो जाने पर गुस्से में आकर मेले में चली जाती है और वहां तब तक झूला झूलती है कि जब तक सारे पैसे झूला झूलने में खत्म नहीं हो जाते। वापसी में भाईयों को बोल देती है कि गुल्लक चोरी हो गई। इनके अलावा कुछ प्रसंग ऐसे भी हैं जो आपकी आंखों की कोरों को बरबस गीला कर डालते हैं तो कहीं आपको आक्रोशित भी कर जाते हैं। ऐसे प्रसंग अधिकांशतः बाबूजी से जुड़े हैं। बाबूजी का चरित्र बहुत जटिल है। सनकी, गुस्सैल और चारित्रिक कमियों के शिकार बाबूजी के

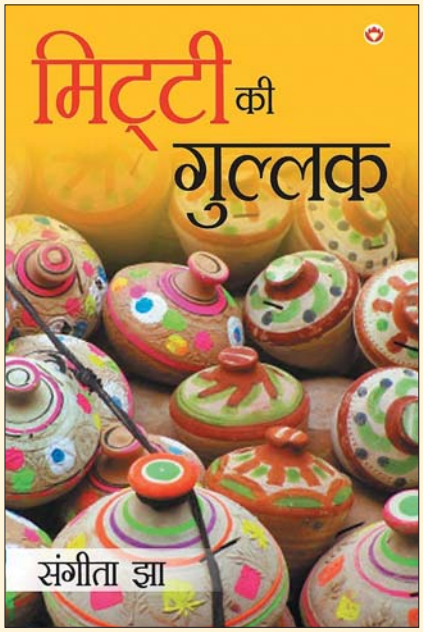

साथ मुन्नी के रिश्ते कभी नफरत वाले हैं तो कभी बेहद लगाव वाले। ऐसे चरित्रों को साधना लेखिका की बड़ी सफलता है। कृति में कुछ पात्र तो अद्भुत हैं जो अपनी अच्छाईयों-बुराइयों के साथ आपकी स्मृतियों में बस जाते हैं। ऐसे पात्रों में सुखबती, अम्मा, बालू चाचा, चौधराईन चाची, मामी दादी आदि को रखा जा सकता है।

कृति की भाषा बेहद सहज और सरल है। लेखिका का भाषा सौष्ठव या शिल्प के चमत्कारों के प्रति कोई आग्रह भी नहीं है। वह बेहद सादगी से परिवेश को बुनती हैं, चरित्रों के कैनवस में रंग भरती हैं और बिना अनावश्यक तामझाम के पाठकों को परोस देती हैं। मुझे तो संपादन की कुछ छुटपुट कमियों के बाद भी यह कृति अपने अनूठे कंटेंट और प्रस्तुति के कारण खूब पसंद आई है। मुझे आशा है कि सरल सहज लेखन के प्रशंसक भी इसे अवश्य पसंद करेंगे।

क्यों पढ़ें यह किताब?

इस किताब की सबसे बड़ी खूबी है इसकी सरलता। इंसानी मनोभावों और रिश्तों की जटिलता ने लेखिका ने जिस खूबसूरती व सरलता से बयां किया है उस आधार पर आप पुस्तक को इस वर्ष की मस्ट रीड श्रेणी में शामिल कर सकते हैं। हमारे घरों की या कह सकते हैं हर घर की कहानियों को लेखिका ने अपनी गुल्लक में संजोकर रखा है।

बढ़ती हुई स्त्रियाँ...

वह आगे बढ़ रही थी,
पीछे छूट रहे थे लहूलुहान कदमों के निशान
उसे परवाह नहीं थी,
यह दूरी उसने सदियों में तय की थी,
छिले हुए तलवों से टपकते लहू से ही वह
लिखने लगी अपनी कामयाबी की
कहानियाँ।
आवाजें अब भी आ रही थीं,
जिन्हें पहले वह घर के भीतर,
घूँघट के भीतर,
चौखट के भीतर से सुनती थी
अब बाहर निकली तो फेंके जाने लगे,
इन्हीं कुंठाओं, द्वेष और जलन में लिपटे
कंकड़

हँसने वालों के चेहरे बदल रहे थे
हँसी नहीं।
ठहाकों के साथ लार टपकती,
उस जैसा कामयाब होने की चाहत भरी लार
लेकिन हँसने वाले अपनी बाँह से लार
पोंछते जाते
और चार लाइन का मंत्र जपते जाते,

"थीसिस में अच्छे नंबर आ गए प्रोफेसर के
साथ सोई होगी"
"दफ्तर में तरक्की मिल गई बॉस के साथ
सोई होगी"
"घर में बंटवारे में ज्यादा पैसा मिल गया,
ससुर को पटा के रखती है"
"समाज में कोई पद मिल गया, देखो कैसे
ठिलठिला कर हँसती है"

धीमे-धीमे यह मंत्र फैलता गया,
दोहे, कविता, जाप, कहानी
जिस रूप में संभव था
उस रूप में अगली पीढ़ी को मिलता गया

अब यह नाकामयाबों का गुरु मंत्र था,
पीढ़ी-दर-पीढ़ी इसी मंत्र में लपेटकर
उसकी राहों में अंगार बिछाई जाती रही,
आज भी बिछाई जा रही है,
लेकिन अब उसे परवाह नहीं
अंगार के डर से रुकना तो उसने कबका
छोड़ दिया।
धीमे-धीमे उसके पैरों में लग जाएँगे
'हर्ड इम्युनिटी' के चक्के
और तब
फूँके जाएँगे गुरुमंत्र बाँटकर आने वाली
पीढ़ियों को दिगभ्रमित करने वालों के
पुतले।

और गूँजेंगे ठहाके हमारे, उनके, सबके
जिनके लहूलुहान कदमों ने तब तक
नाप ली होगी धरती,
लिख दिया होगा आसमां पर भी अपना
नाम।

अंकिता जैन

कर्म, फल और हिंदू संस्कृति

अर्जुन की तरह खोने वालों में से नहीं। सरकारों का स्वार्थ आज ही नहीं, लोग सदियों से भ्रामक व असत्य उपदेशों, तथ्यों, ज्ञानअज्ञान के शिकार रहे हैं।

भारत सरकार आजकल एक मुख्य नीति पर काम करती है। वह आम जनता से कहती है कि तुम काम किए जाओ पर किंचित भी फलों की अपेक्षा न करो। फल तो हमारे लिए, सृष्टि चलाने वालों के लिए हैं। सो, सबकुछ हमारा है। हम तुम्हें जो दे दें, उसी में खुश रहो।भारत सरकार के गीता पढ़ने वाले कर्ताधर्ता यह देख कर अचंभित हो गए कि फल न मिलने के डर से 24 मार्च, 2020 को लौकडाउन घोषित होने पर कैसे मजदूर कर्म छोड़ कर अपने गांवों की ओर चल दिए। वैसे ही लाखों किसान खेतीकिसानी छोड़ दिल्ली की सीमाओं पर फल पाने के लिए स्वयंभू ह्यमैंह्न के खिलाफ मोरचा खोले डटे हैं। देश की मौजूदा कट्टर धर्मवादी भाजपाई सरकार की नजर में तो यह हिंदू संस्कृति के विरुद्ध है और जो गीता के कर्मवाद के सिद्धांत को नहीं मानता उसे न हिंदू कहलाने का हक है न भारतीय। वह तो देशद्रोही है, धर्मद्रोही है, नक्सली है, माओवादी है, खालिस्तानी है।कई हजार वर्षों से गीता का पाठ पढ़ापढ़ा कर लूटने वाले खुद भी इस बात के कायल हैं कि जहां ज्यादा नागरिकों को बिना फल की आशा के कर्म करना चाहिए वहीं ह्यकुछ कोह्न बिना कर्म के फल पाने का मौलिक अधिकार है। भाजपाई नेता, सरकारी अफसर, सांसद, मंत्री, पंडेपुजारी, इन के व्यापारी भक्त, धर्म व्यापारों को फैलाने में लगे वास्तुचार्य, आयुवेर्दाचार्य, योगाचार्य और विश्वविद्यालयों से प्राथमिक कक्षा तक के अध्यापक पठनपाठन कर के फल पाने के अधिकारी हैं।

जबकि, कर्म करने वालों को बिना सोचेसमझे, बिना अर्जुन की तरह प्रश्न किए, गीतापाठ का अनुसरण करते रहना चाहिए।यदि खोजी, वैज्ञानिक, इंजीनियर, डाक्टर, मैडिकल हैल्प देने वाले, मजदूर, सफाईकर्मी और औरतें भी किसानों की तरह अपने फल की मांग करने लगें तो हिंदू धर्म पर काला साया फिर पड़ सकता है। बड़ी मुश्किल से 2,500 वर्षों बाद आधे भारत पर (पाकिस्तान, बंगलादेश, अफगानिस्तान को निकाल कर) पौराणिक व गीता राज स्थापित हुआ है। इसे कैसे हाथ से निकलने दें। किसानों के आंदोलन की जो चिंता नहीं की जा रही है उस का कारण यही है कि सेवकोंसेविकाओं का मर्म तो धर्म की घुट्टी पिए हुए है।

फिर अगर कुछ विवाद है तो यह सिरफिरों का है, कुछ समय ही तो रहेगा।पुराण और गीतापाठी यह नहीं समझ सकते कि अर्जुन के सवाल महाभारत के युद्ध के पहले दिन बिलकुल सही थे। उस ने जितनी आपत्तियां उठाईं वे सब ठीक थीं और उन के कृष्ण द्वारा दिए गए उत्तर झूठे व भ्रामक थे। 18 दिनों बाद उस का परिणाम आ गया था जब सिर्फ कौरव और पांडु परिवार में सिर्फ 5 पांडव बचे थे।भारत में इस पौराणिकवाद की वजह से 5-6 उद्योगपति और ढेर सारे ऋषिमुनि बचेंगे। देश की बागडोर विदेशी कंपनियों के हाथों में होगी। आजकल शेयर बाजार तेजी से ऊंचा जा रहा है क्योंकि विदेशी, जो हमारी गीता का पाठ ज्यादा अच्छी तरह समझते हैं, भारतीयों की कंपनियों को खरीद रहे हैं। अंबानी, अडानी, टाटा, बिड़ला खुद भी विदेशियों के हाथों बिके हुए हैं। उन की कंपनियां विदेशी पैसे पर और विदेशी तकनीक पर टिकी हैं। उन को भी गीतापाठ में बड़ा भरोसा है, पर वे कृष्ण की तरह पाने वालों में से हैं, अर्जुन की तरह खोने वालों में से नहीं।सरकारों का स्वार्थ आज ही नहीं, लोग सदियों से भ्रामक व असत्य उपदेशों, तथ्यों, ज्ञानअज्ञान के शिकार रहे हैं। मानव को जितनी मुश्किलें इस बहकावे से झेलनी पड़ी हैं उतनी राजाओं के हमलों, प्रकृति की मार, बीमारियों, खाने की कमी, विवादों से नहीं झेलनी पड़ीं। धर्म की नींव ही कपोलकल्पित कहानियों पर डाली गई है। पृथ्वी व मानव के जन्म की झूठी कहानियां गढ़ कर लगभग सभी मानवों को एकदूसरे का शत्रु बनाया गया और समाज के गठन के अद्भुत आविष्कार को बुरी तरह बारबार निष्क्रिय करने की कोशिश की गई है।

यह उन थोड़े से लोगों का कमाल है जिन्होंने बुरी तरह फैले विस्मृत करते अज्ञान के बावजूद तकनीक का विकास किया और नएनए प्रयोग किए ताकि मानव सुरक्षित रह सके। आज की वैज्ञानिक व तकनीकी उपलब्धियां उसी की देन हैं। पर एक बार फिर सूचना के आदानप्रदान की कला का भरपूर दुरुपयोग हो रहा है।इंटरनैट, जिसे दुनिया को जोड़ना था, आज पड़ोसियों को अलगथलग करने में इस्तेमाल हो रहा है, नागरिकों को नियंत्रित करने में इस्तेमाल हो रहा है, घृणा फैलाने में इस्तेमाल हो रहा है आदि।दुनियाभर की सरकारों ने इस बारे में पहल की है। हर चीज को औनलाइन करने की बाध्यता कर के हरेक पर पूरी तरह या घंटों नजर रखने की कोशिश की जा रही है ताकि सरकारविरोधी कोई भी कदम न उठ सके। आज भारत में ही नहीं, दुनिया के कितने ही देशों में लोगों ने सरकार के खिलाफ कुछ पढ़ालिखा या कुछ लिखे को अपने लोगों में शेयर किया, लेकिन सरकारों ने इसे देशद्रोह माना। अकसर देशों की सरकारें चाहती हैं कि इस तकनीक का इस्तेमाल केवल सरकार के प्रति अंधभक्ति फैलाने व गलत कामों को भी सही ठहराने की प्रवृत्ति में किया जाए।जितना झूठ आज सरकारें दुनियाभर में इंटरनैट के माध्यम से फैला रही हैं, उतना व्हाट्सऐप या फेसबुक पर से नहीं फैल रहा। कुछ लोग या समूह, व्हाट्सऐप और फेसबुक यदि घृणा व दुष्प्रचार कर रहे हैं तो इसलिए कि उन्हें उक्त देशों की सरकारों का मूक समर्थन मिला हुआ है। जैसे ही किसी देश में जनता बेचैन हो कर इंटरनैट के इन तरीकों का इस्तेमाल अपने गुस्से के लिए करना शुरू कर देती है, वैसे ही वहां की सरकारें फेसबुक, गूगल, इंस्टाग्राम आदि पर चढ़ बैठती हैं और उन्हें बंद करा देती हैं या उन का बिजनैस ठप कराने के तरीके ढूंढ़ने लगती हैं।इंटरनैट के ये टूल्स मुफ्त में नहीं चलते। गूगल हो या फेसबुक, इन के पीछे अरबोंखरबों डौलरों की पूंजी लगी है। आप यदि सोचें कि ये मुफ्त हैं तो ऐसा नहीं है। ये सब ज्यादा से ज्यादा पैसा वसूलते हैं। इन में विज्ञापन तो होते ही हैं, आप कौन हैं, कहां के हैं, क्या कमियां हैं, क्या खरीदते हैं ये सब जानकारियों भी होती हैं जो बेची जाती हैं। यह पूंजी ग्राहकों से ही अपरोक्ष रूप से वसूली गई है। सरकारी दखल के कारण ये प्लेटफौर्म्स आज खतरे में हैं क्योंकि ये प्लेटफौर्म्स अब सरकारें बदलने में भी लग गए हैं। इंटरनैट के नारों पर सरकारों का कंट्रोल है, इसलिए जहां सरकार को लगता है कि फलां प्लेटफौर्म सत्ता पर काबिज लोगों के खिलाफ जा रहा है वहां कंट्रोल की बात शुरू हो जाती है। इंटरनैट की तकनीक पेड़ों से उतर कर गांव बसा लेने जैसी तकनीक थी। पहले हर पेड़ का मानव अकेला था। गांव में वह एक समूह में रह कर प्रकृति का मुकाबला करने को सक्षम हुआ था। इंटरनैट ने दुनिया के लोगों को एकसाथ जोड़ा। पर अब सरकारों के इशारों पर जोड़ने की जगह इंटरनैट का इस्तेमाल आपस में विरोध पैदा करने के लिए किया जा रहा है। सरकारें इस के जरिए अपनी जनता को बांट रही हैं और दूसरे देशों के नागरिकों को भी दुश्मन की श्रेणी में लाने के लिए कर रही हैं। सरकार अपनी ही जनता को बांट कर अन्याय के सहारे ही राज कर लेती है। आम जनता को लड़ाया जा रहा है। एकदूसरे के प्रति संदेह पैदा किया जा रहा है। धर्म और बिग बिजनैस इसे बनाए रखना चाहते हैं।यह एक असामान्य स्थिति है। पर लगता नहीं कि इस से छुटकारा मिलने वाला है। धर्म और राजनीतिक दल चाहते हैं कि हर समय लोग दुश्मन बने रहें ताकि वे इस बहाने जनता का मुंह बंद रख सकें। आम जनता अगर इस तकनीक पर निर्भर हो रही है तो वह यह न भूले कि यह तकनीक विकास के साथ आने वाले प्रदूषण की तरह जहर भी दिमाग में घोल रही है।उम्मीद की किरणभयंकर मंदी के दिनों में भी अक्तूबरनवंबर में छोटी गाड़ियों, बाइकों की ब्रिकी कुछ बढ़ी है। इस से औटो निमार्ताओं के माथे की शिकनें कुछ कम हुई हैं। इस की वजह, एक्सपर्ट्स के अनुसार, कोविड ही है क्योंकि लोगों को अब पब्लिक ट्रांसपोर्ट से जाना खतरनाक लगता है। अब शहरों ही नहीं, गांवों में भी दूरियां इतनी हैं कि साइकिल का सवाल ही नहीं उठता। सो, सुरक्षा की दृष्टि से परिवारों ने पुरानी बचत को गाड़ी खरीदने में खर्च करने का फैसला किया है क्योंकि परिवार के एक सदस्य के बीमार होने पर उस के इलाज में गाड़ी पर लगाई गई पूंजी से कहीं ज्यादा का नुकसान हो सकता है।अपना वाहन होना आजकल शहरों के लिए अनिवार्य होने लगा है, चाहे इस की वजह से कितनी ही दिक्कतें हों। कारों की तो छोड़िए, अब बाइकों को खड़ा करने की जगह भी नहीं मिल रही है, न घर के आसपास न काम की जगह पर। वाहनों से होने वाले ऐक्सिडैंट बढ़ते जा रहे हैं और 50 फीसदी से ज्यादा वाहन मालिक इंश्योरैंस रिन्यू नहीं कराते। इंश्योरैंस इनफौर्मेशन ब्यूरो के अनुसार, लगभग 75 फीसदी दोपहिया वाहनों का इंश्योरैंस नहीं है। ऐसे में उन से होने वाली दुर्घटनाओं में कोई मुआवजा नहीं मिल पाता।दिक्कत यह है कि हमारे शहरों का विकास सही तरह से नहीं हो रहा है।

मकान बनते हैं पर न सीवर होता है, न पार्किंग, न खुले मैदान, न स्कूल। हर काम कल पर टाला जाता है। निकायों के जिम्मेदार लोग राजनीति में ज्यादा लगे रहते हैं बजाय शहरों के रखरखाव करने के। नतीजा यह है कि लोगों को काम मिलता है मीलों दूर। स्कूल होते हैं तो मीलों दूर, रिश्तेदार भी मीलों दूर रहते हैं। उन से मिलना हो तो क्या करें? पब्लिक ट्रांसपोर्ट दरवाजे तक तो नहीं ले जाएगा न।अपने यानी निजी वाहनों की खरीद इसीलिए बढ़ी और इसीलिए भारत में वाहन दुर्घटनाओं के हादसे बढ़ रहे हैं व मौतें भी बढ़ रही हैं। भारत में एक लाख वाहनों पर 130 मौतें होती हैं जबकि अमेरिका में मात्र 14, इंग्लैंड में 6, सिंगापुर में 20, श्रीलंका में 70, फिनलैंड में 5, जापान में 6 और स्विट्जरलैंड में सिर्फ 3। सो, अपने वाहन खरीद कर लोग कोविड से तो बच रहे हैं पर मौतों से नहीं।हमारे देश में सड़क को गरीब की जोरू सब की भाभी माना जाता है जिस पर गाएं मनमरजी घूमती रहती हैं, पटरी पर दुकानें लगी होती हैं, लोग बिना देखे सड़क पार करते हैं और लालबत्तियां अकसर खराब रहती हैं। पुलिस तो केवल चालान करने के लिए मुस्तैद रहती है देश की उन्नति में निजी वाहनों का योग रहता है क्योंकि इन्हें खरीदने के लिए लोग खासी मेहनत करते हैं।

पैट्रोल की कीमतों के जिम्मेदार

संतोष उत्सुक

इस मामले में गाड़ियां बनाने वाले भी जिम्मेदार हैं जो उनकी तारीफ कर शौकीनों को ललचाते हैं, वे दूसरे खर्च कम कर गाड़ी खरीदते हैं और इस ललचाहट का फायदा उठाते हैं बैंक, जो कर्ज देते हैं चाहे गाड़ी ज्यादा समय तिरपाल के नीचे उदास खड़ी रहे। यह बात पानी की तरह उपलब्ध है कि जब भी पैट्रोल महंगा हो, उसकी जिम्मेदार सरकार नहीं हुआ करती। आम जनता तो हमेशा की तरह संतुष्ट है, कुछ गैर जिम्मेदार लोग ही महंगे पैट्रोल के लिए सीधे सीधे सरकार को दोषी मान रहे हैं। यह तो लोकतान्त्रिक अमिट रिवायत है कि जब आप शासक हों तो हर चीज के लिए आप जिम्मेदार होंगे, क्यूंकि जब हम शासक होते हैं तो आप तेल और पानी के लिए भी हमें ही जिम्मेदार ठहराते हैं। कुछ भी हो हर राजा को राजकीय प्रवृति के अनुसार सब सामान्य समझना पड़ता है। आम जनता गलत नक्षत्रों में पैदा होती है इसलिए उसके भाग्य में पिसना लिखा होता है और खास लोगों का कर्तव्य होता है उसे पीसना। एक साल तक अधिकांश लोग घरों में कैद रहे। गाड़ियां सड़क किनारे, गैरेज में खड़ी परेशान रही, कई इंजन तो बेहोश ही हो गए थे। अब गाड़ियां हिलने, चलने, बिकने का मौसम आया तो जनता सोचने लगी कि कोई नई मुसीबत आ जाए, इससे पहले घूम फिर, खा पी, मजे कर लें। बरसों से किसी न किसी गाड़ी को प्यार से देख रहे थे, खरीद कर चल कहीं दूर निकल जाते, मगर तेल को अभी हमारी जड़ों में तेल डालना था।

इस मामले में गाड़ियां बनाने वाले भी जिम्मेदार हैं जो उनकी तारीफ कर शौकीनों को ललचाते हैं, वे दूसरे खर्च कम कर गाड़ी खरीदते हैं और इस ललचाहट का फायदा उठाते हैं बैंक, जो कर्ज देते हैं चाहे गाड़ी ज्यादा समय तिरपाल के नीचे उदास खड़ी रहे। इसमें योगदान होता है बस वालों की तरफ से भी, जो बसों को वातानुकूलित नहीं करवाते, सीटें ठीक नहीं करवाते, सफर के बीच में बार बार बस रोकते हैं, तभी ज्यादा आम लोग निजी वाहन खरीदने को प्रेरित होते हैं। गाड़ी खरीद ली जाती है फिर चाहे पैट्रोल मंहगा होता जाए। सशक्त विपक्ष की कमी भी महंगे पैट्रोल के लिए कम जिम्मेदार नहीं। उन्हें अपने स्वार्थों की पड़ी होती है अगर वे एकजुट रहें और असली दबाव बनाए रखें तो पैट्रोल क्या कुछ भी महंगा न हो। गाड़ियों का विज्ञापन करने वाले लाखों करोड़ों कमाते हैं, विज्ञापन कम्पनियां भी बच्चों, महिलाओं के माध्यम से गाड़ियां बिकवाती हैं, खुद भी खूब कमाती हैं, लेकिन कभी एक शब्द पैट्रोल डीजल सस्ता करने के लिए नहीं कहती। बढ़िया सडकों पर गाड़ियां खूब चलती हैं तो तेल भी खूब बिकता है, चाहे पत्नी से दोगुने ब्याज पर कर्ज लेना पड़े। पता नहीं यह बात ठीक है या गलत, कहा जाता है इस धंधे में सरकारें खूब कमाती हैं, कमाए गए पैसे से विकास के विज्ञापन देती हैं। महंगा तेल बेचकर शानदार राजनीतिक लारियां चलाए रखती है। इतना बड़ा देश चलाना और चुनाव जीतते रहना आसान काम तो नहीं है। वैसे लोग अगर पैदल चलना शुरू कर दें तो पैट्रोल के दाम बढ़ने का सवाल ही पैदा न हो, हो सकता है कुछ क्षेत्रों में पैट्रोल पम्प बंद हो जाएं। पैट्रोल उत्पादक देशों को लेने के देने पड़ सकते हैं। यदि आज पैट्रोल का विकल्प बन जाए तो परसों पैट्रोल बहुत सस्ता हो सकता है।

> कभी विदेशियों तो कभी नीति, सरकार, किस्मत या अन्य किसी को दोष देना आसान है। यह बड़ी हैरानी की बात है कि अब तक किसी भी बुद्धिजीवी तो क्या अबुद्धिजीवी ने भी पैट्रोल की जलती कीमतों के लिए, लकड़ी का पहला पहिया बनाने वाले आदि मानव को जिम्मेदार नहीं ठहराया। यदि ऐसा किया होता तो न हींग लगता न फटकरी और रंग भी चोखा चढ़ जाता। हर बार निंदा करने के लिए स्थायी दोषी भी उपलब्ध रहता। दोषी भी ऐसा जो कभी तर्क वितर्क न करता। वास्तव में असली जिम्मेदार भी तो वही है।

कभी विदेशियों तो कभी नीति, सरकार, किस्मत या अन्य किसी को दोष देना आसान है। यह बड़ी हैरानी की बात है कि अब तक किसी भी बुद्धिजीवी तो क्या अबुद्धिजीवी ने भी पैट्रोल की जलती कीमतों के लिए, लकड़ी का पहला पहिया बनाने वाले आदि मानव को जिम्मेदार नहीं ठहराया। यदि ऐसा किया होता तो न हींग लगता न फटकरी और रंग भी चोखा चढ़ जाता। हर बार निंदा करने के लिए स्थायी दोषी भी उपलब्ध रहता। दोषी भी ऐसा जो कभी तर्क वितर्क न करता। वास्तव में असली जिम्मेदार भी तो वही है।

मूवी रिव्यू: राजकुमार के नाम ने रूही को पार कराई वैतरणी, जान्हवी और वरुण शर्मा की बढ़िया कलाकारी

कहानी: 'रूही' एक छोटे शहर में रहने वाले दो लड़कों और उनकी जिंदगी में आई एक लड़की की कहानी है। भूरा पांडे (राजकुमार राव) और कट्टानी कुरैशी (वरुण शर्मा) कुछ अजीब परिस्थितियों में रूही (जान्हवी कपूर) के साथ फंस गए हैं। रूही को देखकर पहले पहल यही लगता है कि वह सीधी-सादी सी लड़की है। लेकिन फिर उसकी दूसरी पर्सनैलिटी सामने आती है। भूतिया, चुड़ैल वाला रूप। इस पर्सनैलिटी का नाम है आफ्जा। अब भूरा को रूही से प्यार हो जाता है और कट्टानी को आफ्जा से। इन तीनों के बीच रोमांस की अलग तरंगे अंगड़ाई लेती हैं और कहानी यहीं से आगे बढ़ती है।

कलाकार: राजकुमार राव, वरुण शर्मा, जान्हवी कपूर, मानव विज, एलेक्स ओ नील, सरिता जोशी, राजेश जैस, गौतम मेहरा, आदेश भारद्वाज और अनुराग अरोड़ा आदि।

लेखक: गौतम मेहरा, मृगदीप सिंह लांबा

निर्देशक: हार्दिक मेहता

निमार्ता: दिनेश विजन

भूरा, आफ्जा से छुटकारा पाना चाहता है, जबकि कट्टानी ऐसा नहीं चाहता। वह चाहता है कि आफ्जा भी रूही के साथ ही रहे, ताकि वह उससे रोमांस कर सके। अब भूरा और कट्टानी दोनों अलग-अलग तरकीब निकालते हैं ताकि वह अपने प्यार और रोमांस की राह में कोई अड़चन न आने दें। लेकिन उनकी ये तरकीबें उन्हीं पर भारी पड़ती हैं। अजीब-अजीब तरह की समस्याएं सामने आती हैं। इन सब के बीच हंसी की फुहारे भी हैं। कई तरह के अजीब कैरेक्टर आते हैं और फिल्म में आगे क्या होता है, यह अंत में पता चलता है।

रिव्यूः साल 2018 में दिनेश विजान हॉरर-कॉमेडी 'स्त्री' लेकर आए थे। फिल्म को काफी पसंद किया गया। लेकिन किसी और डायरेक्टर-प्रड्यूसर ने इस जॉनर में कोई खास काम नहीं किया। बतौर प्रड्यूसर दिनेश विजान अब 'रूही' लेकर आए हैं। डायरेक्शन का जिम्मा हार्दिक मेहता के कंधों पर है और वह बहुत हद तक हॉरर को कॉमेडी में ढालने में सफल भी होते हैं। फिल्म के तीनों मुख्य कलाकारों- राजकुमार राव, जान्हवी कपूर और वरुण शर्मा ने अपने-अपने हिस्से में अच्छा काम किया है। राजकुमार राव पर्दे पर एक बार फिर स्मॉल टाउन बॉय वाली छवि लेकर आए हैं। रंगे हुए बाल और अपनी चुटीली हंसी के साथ वह कैरेक्टर में जमते हैं। हालांकि, कई मौकों पर वह 'स्त्री' फिल्म में अपने कैरेक्टर से मेल खाते हैं। लेकिन फिर भी वह अपने अंदाज और बॉडी लैंग्वेज से यह कोशशि करते रहते हैं कि दर्शकों को दोहराव न लगे। वरुण शर्मा की कॉमिक टाइमिंग गजब की है। उनके एक्सप्रेशंस देखकर आपकी हंसी छूट जाती है। जबकि रूही हो या आफ्जा, दोनों ही किरदारों में जान्हवी ने भी अपना रंग जमाया है।

जान्हवी जब आफ्जा बनती है तो सबको डराती हैं, वहीं जब वह रूही का रूप लेती हैं तो एक डरने वाली लड़की के अंदाज को भी बखूबी निभाती हैं। 'धड़क' और 'गुंजन सक्सेना' में जान्हवी को देखकर जो उम्मीदें जगी थीं, उन्होंने 'रूही' में उसे पूरा करने की पूरी कोशशि की है। जान्हवी को देखकर यह यकीन हो जाता है कि वह इस रेस में लंबा टिकेंगी। फिल्म में वैसे तो हंसने और हंसाने के कई मौके हैं, लेकिन इमसें 'दिलवाले दुल्हनियां ले जाएंगे' से लेकर 'टाइटैनिक' तक के आइकॉनिक सीन्स को लेकर भी हंसी का पुट जोड़ा गया है। 'रूही' की कहानी मृगदीप सिंह लाम्बा और गौतम मेहरा ने लिखी है। उन्होंने कई फन वन लाइनर्स दिए हैं, जो आसानी से दर्शकों को हंसाने में कामयाब हो जाते हैं। लेकिन कुछ ऐसा भी है, जहां यह फिल्म चूक जाती है। फिल्म में मुख्य कहानी के साथ भी कई कहानियां हैं। जो मुख्य किरदारों का भूतकाल है। यह हमें बताया भी जाता है, लेकिन पिछली कहानियों का बहुत कम हिस्सा ही फिल्म में हमारे साथ टिक पाता है। दो घंटे से अधकि समय की इस फिल्म में एडिटिंग को और चुस्त रखा जा सकता है। 'रूही' में तमाम एंटरटेनमेंट के साथ खुद से प्यार करने का मेसेज भी है। यह एक हद तक को ठीक है, लेकिन इसी मेसेज के साथ अंत डायरेक्टर के लिए सुविधाजनक सा है। कुछ बेतरतीब, जिसमें पंच की कमी खलती है। फिल्म के म्यूजिक की बात करें तो 'नदियों पार' और 'पनघट' ये दो गाने मुख्य हैं। ये दोनों ही गाने फिल्म की शुरूआत और अंत में क्रेडिट्स के साथ दिखाए गए हैं। सचिन-जिगर का संगीत फिल्म खत्म होने के बाद ही दर्शकों के साथ रहता है। कुल मिलाकर, फिल्म हॉरर-कॉमेडी है और इसके साथ न्याय भी करती है। फिल्म में अच्छा खासा एंटरटेनमेंट का डोज है और थएिटर में बैठकर बड़े पर्दे पर दोबारा किसी फिल्म का लुत्फ उठाने के लिहाज से भी अच्छा विकल्प है।

कुल मिलाकर, फिल्म हॉरर-कॉमेडी है और इसके साथ न्याय भी करती है। फिल्म में अच्छा खासा एंटरटेनमेंट का डोज है और थएिटर में बैठकर बड़े पर्दे पर दोबारा किसी फिल्म का लुत्फ उठाने के लिहाज से भी अच्छा विकल्प है।